अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष : 44, संयुक्तांक : 5-6, 16-31 अक्टूबर एवं 01-15 नवंबर 2020

जब उस्ताद जाग रहा हो, तो शागिर्द को गहरी नींद ले लेनी चाहिए, क्योंकि उस्ताद जब पाँव ज़मीन पर रखेगा, तो उसकी पहली धमक शागिर्द को ही महसूस करनी होगी। गाँधी एक शानदार प्रयोगशाला थे, जहाँ इंसानों को इंसान बनाने की प्रक्रिया चलती थी। गाँधी ने बताया कि नफरत का विकल्प नफरत नहीं, बल्कि प्रेम है। झूठ का विकल्प झूठ नहीं, बल्कि सच है। मक्कारी का विकल्प मक्कारी नहीं, बल्कि सरलता है। एक दिन यह दुनिया मानेगी कि झूठ के सामने सच और नफरत के सामने प्रेम ही टिकेगा।

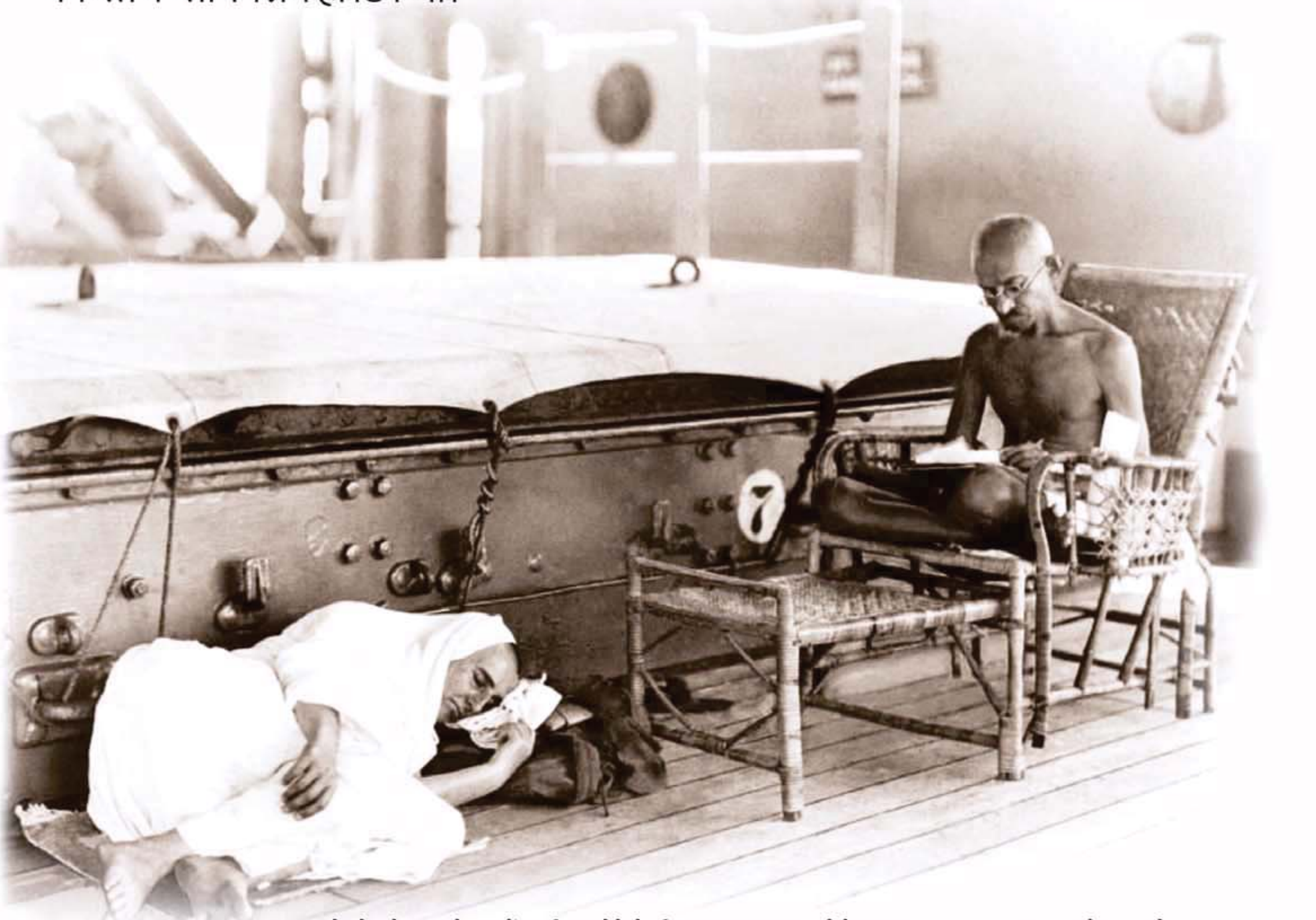

29 अगस्त 1931 को गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के लिए गांधी जी मुम्बई से एस एस राजपुताना जहाज से लंदन के लिए रवाना हुए। यह उसी जहाज पर अध्ययन करते गांधी जी और आराम करती मीराबेन की तस्वीर है।

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 44, संयुक्तांक : 5-6, 16-31 अक्टूबर एवं 01-15 नवंबर 2020

कार्यकारी अध्यक्ष
चंदन पाल

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर कुसुम**
प्रो. सोमनाथ रोडे **अरविन्द अंजुम**
अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. गांधी और आत्मनिर्भर भारत... 3
3. खोट गांधी की प्रासंगिकता में नहीं... 5
4. आमंत्रण : सर्व सेवा संघ अधिवेशन... 6
5. बतख मियां न होते तो गांधी युग... 7
6. टाना भगत और गांधीजी... 8
7. गांधी दर्शन... 9
8. मकतूल खुद गिरा था खंजर की... 10
9. भारतीय राजनीति पर राष्ट्रनीति के... 13
10. लोकतंत्र की अंतिम क्रिया... 15
11. जेपी आज होते तो कितने लोग उनका... 19
12. साजिशों के इस दौर में... 20
13. काहे री नलिनी तू कुम्हिलानी... 21
14. महादेव के व्यंग्य... 22
15. खिदमत का आलम... 22
16. गंगा को निर्मल रहने दो, गंगा को... 24
17. टरबाइन-विज्ञान : अज्ञान या फरेब... 26
18. लोकतंत्र बहुमत की रंगदारी से... 28
19. सत्याग्रह की जन्मभूमि-चंपारण... 29
20. बिहार चुना 2020 : धर्म पर भूख... 31
21. किसानों का भारत बंद... 32
22. पर्यावरण सुधार को स्थाई रखने... 33
23. काम की इन दवाओं को याद रखिये... 34
24. लोक-विमर्श... 35
25. गतिविधियां एवं समाचार... 36
27. कविता... 40

संपादकीय

वर्तमान दौर की चुनौतियां

क्या कोरोना महामारी ने राजसत्ताओं को स्वास्थ्य के प्रश्न के प्रति अधिक संवेदनशील बनाया है? इस प्रश्न के जवाब के लिए हमें राजसत्ता की पिछले छः महीनों की नीतियों पर एक दृष्टि डालनी होगी। दूसरे राजसत्ता के प्रचार तंत्र द्वारा जनता में किस मानसिकता का विकास करने का प्रयास किया गया है, इसे भी समझना होगा।

पिछले कुछ वर्षों में दुनिया भर में राजसत्ताओं पर उनका नियंत्रण बढ़ा है, जो पूंजीवादी-कारपोरेटी व्यवस्था को मजबूत करने की नीतियों को बढ़ाने वाले हैं। इसके दो पक्ष हैं—एक, पूंजी का केन्द्रीकरण तथा दूसरे, जहां कहीं भी संसाधन (विशेषकर प्राकृतिक स्रोत) केन्द्रीकृत पूंजीव्यवस्था (कारपोरेटी व्यवस्था) के नियंत्रण में होने के बजाय, लोक समुदायों या सार्वजनिक उपक्रमों के नियंत्रण में हैं, वहां से उन्हें (संसाधनों को) निकाल कर केन्द्रीकृत कारपोरेटी नियंत्रण में ले जाया जाना। आम जनता में इन नीतियों के प्रति विद्रोह न हो, इसके लिए तीन तरीके अपनाये जाते हैं—(1) जनता में धर्म-जाति-भाषा-क्षेत्रीयता आदि के आधार पर वैमनस्य व फूट फैलाना; (2) युद्ध का माहौल बनाये रखना तथा (3) अपने प्रचार तंत्र के माध्यम से गैरजरूरी मुद्दों को फोकस में बनाये रखना और इन सबके साथ जो राजसत्ता व उसकी नीतियों का विरोध करे, उसे राष्ट्रद्रोही के रूप में प्रचारित करना।

कोरोना महामारी के आने के बाद शुरू के एक महीने ऐसा दिखावा हुआ जैसे राजसत्ता सब कुछ छोड़कर केवल कोरोना के प्रति गंभीर है। किन्तु वास्तविक नीति कुछ और थी। कोरोना के नाम पर जनता किसी प्रकार संगठित न हो, यह सुनिश्चित किया गया। जानबूझकर एक मानसिकता का निर्माण किया गया कि लोग घर पर ही रहें। केवल अति आवश्यक कार्य हो तभी घर से निकलें। इस बीच छोटे उद्योग एवं छोटे व्यापार नष्ट होते चले गये। घरों से दूर जाकर काम करने वाले, भुखमरी के कगार पर जा पहुंचे। इसलिए उन्होंने तय किया कि मरना ही है तो अपने गांव लौट कर अपनों के बीच मरें। सरकार ने इस गांव वापसी पर भी अड़ंगे डाले। गांव वापस लौटते मजदूरों की त्रासदी भी हमें संवेदनशील नहीं बना सकी। मजदूर ही नहीं, पढ़े-लिखे युवाओं में भी व्यापक बेरोजगारी फैल गयी। लेकिन मानसिकता यह बनायी जाती रही कि सामाजिक दूरी बनाये रखें। आप भी बेरोजगार व भुखमरी के कगार पर हैं और हम भी, लेकिन सामाजिक दूरी बनाये रखें। जाति-धर्म-संप्रदाय आदि के नाम पर जो सामाजिक दूरी थी, उसमें एक नया आयाम जुड़ गया। एक-दूसरे से मिलना खतरनाक है, यह मानसिकता बना दी गयी। किसी भी तानाशाही-लोकविरोधी व्यवस्था के लिए यह सबसे अनुकूल स्थिति होती है कि लोग आपस में न मिलें तथा एक दूसरे को शक की नजर से देखें।

ऐसी परिस्थिति का निर्माण हो गया, जिसमें सार्वजनिक विमर्श एवं लोक के साथ संवाद अपने सबसे निचले स्तर पर आ गया। तब राजसत्ता ने कई दूरगामी परिणाम वाले कानूनों को बना डाला। शिक्षा नीति में परिवर्तन, श्रमनीति में परिवर्तन, कृषि नीति में परिवर्तन, तमाम सार्वजनिक उपक्रमों का निजीकरण, कारपोरेट जगत को वित्तीय सुविधाएं, प्राकृतिक संसाधनों को कारपोरेट व विदेशी निवेशकों के लिए खोलना आदि ऐसे कई कानून बनाये गये। क्योंकि यही दौर कारपोरेट जगत के हित में दूरगामी परिवर्तन लाने का सबसे अनुकूल दौर बन गया है।

ऐसे में अहिंसक क्रांति के आंदोलनकारियों को भी एक दूरगामी रणनीति के तहत काम करना होगा। सबसे पहले आपसी एकता को दृढ़ता से मजबूत करना होगा। छोटे-मोटे मतभेद हों तो भी राष्ट्रहित में उन्हें भुलाकर एकजुट होना होगा। दूसरे, जनता की व्यापक एकता के निर्माण के लिए आर्थिक अन्याय के आयामों एवं राष्ट्रीय संप्रभुता को क्षीण करने वाले आयामों का खुलासा कर उनके इर्दगिर्द व्यापक जन एकता के निर्माण का अभियान चलाना होगा। उन सारी परिवर्तनकारी शक्तियों को एक मंच पर लाना होगा जो लोकसत्ता व लोकशक्ति के माध्यम से परिवर्तन के लिए कटिबद्ध हैं। कार्यकर्ताओं को नयी परिस्थिति के लिए तैयार करने के लिए प्रशिक्षण एवं साहित्य निर्माण के कार्य को भी चुस्त-दुरुस्त करना होगा। वर्तमान दौर की चुनौतियां, पिछली चुनौतियों का विस्तार भी हैं और नयी भी। इसी अनुरूप आंदोलन की नयी रणनीति बनानी होगी।

–बिमल कुमार

गांधी और आत्मनिर्भर भारत

❑ पराग मांदले

एक समय बहुत-सी दुकानों में दुकानदार की कुर्सी के ठीक पीछे गीता का ज्ञान शीर्षक से एक कैलेंडर टंगा होता था या कोई स्टीकर लगा होता था, जिस पर लिखा होता था कि तुम क्या लेकर आये थे, जो खो जाएगा। और तुम जब जाओगे तो क्या लेकर जाओगे। और मजे की बात यह है कि इसके ठीक नीचे या आगे बैठकर वह दुकानदार बेची जा रही चीजों पर अधिक से अधिक मुनाफा कमाने की कोशिश करता था और उसी दुकान में काम करने वाले नौकरों को कम से कम मजदूरी देने की कोशिश करता था। यह याद आने की वजह है, हमारे प्रधानमंत्री द्वारा दिया गया एक वक्तव्य, जिसमें उन्होंने कहा कि महात्मा गाँधी का जो आर्थिक चिन्तन था, अगर देश उस रास्ते पर चला होता तो आज आत्मनिर्भर भारत अभियान की जरूरत ही नहीं पड़ती।चूँकि इस वक्तव्य के कुछ ही दिन बाद गांधी जयंती मनाई जाने वाली थी इसलिए महात्मा गांधी को याद करना समीचीन था। जो वक्तव्य दिया गया, उससे किसी भी तरह की तनिक भी असहमति का कोई प्रश्न नहीं उठता। फिर उस वक्तव्य का यहाँ उल्लेख करने का औचित्य क्या है, यह सवाल किसी के भी मन में आ सकता है। उस सवाल का जवाब यह सवाल है कि क्या आज आत्मनिर्भर भारत योजना लागू करते समय भी भारत महात्मा गांधी के आर्थिक चिन्तन के अनुरूप चल रहा है?

इस सवाल का जवाब हाल के कुछ महीनों में घटी दो घटनाओं से ज्यादा बेहतर ढंग से समझा जा सकता है।पहली घटना को उन तस्वीरों से समझा जा सकता है, जिसमें कोरोना महामारी के चलते अपने काम धंधे से वंचित और भूखों मरने को मजबूर होने वाले मजदूरों के परिवार पैदल ही अपने गाँवों के लिए रवाना होते दिखाई देते हैं। दूसरी घटना वह ख़बर है, जिसमें बताया गया है कि अब मुकेश अंबानी दुनिया के चौथे सबसे अमीर व्यक्ति बन गए हैं। इन दो घटनाओं के बीच का विरोधाभास स्वतंत्रता के बाद से आज तक अपनायी गई या अपनायी जा रही हमारीं आर्थिक नीतियों की हकीकत को स्पष्ट करता है। हमने अंततः इस देश को

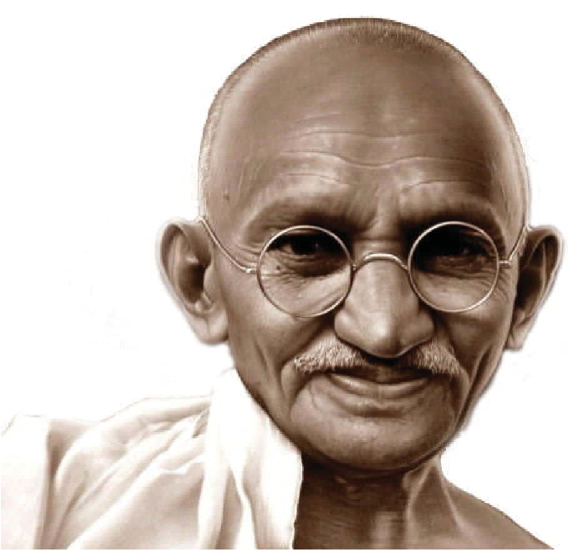

उस मुकाम पर लाकर खड़ा कर ही दिया है, जहाँ देश के चंद लोग अमीरी में दुनिया के अन्य अरबपतियों से प्रतियोगिता करें और दूसरी ओर हमारे देश के करोड़ों लोग रोटी के एक टुकड़े के लिए दर-दर की ठोकर खाने पर मजबूर हों। क्या यही था गांधी का आर्थिक चिंतन, जिसकी दुहाई दी जा रही है?

करीब 83 साल पहले 9 अगस्त 1937 के हरिजन अख़बार में गांधी लिखते हैं - जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाता है और कमजोरों को हानि पहुँचाकर सबलों को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा और भयानक अर्थशास्त्र है। वह मृत्यु का दूत है। इसके विपरीत सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय की हिमायत करता है; वह सबकी– जिनमें दुर्बल से दुर्बल भी शामिल हैं – समान रूप से भलाई चाहता है।

इस वाक्य के आलोक में यदि हम पिछले 73 सालों का इस देश का आर्थिक सफर देखें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि हम गांधी के आर्थिक चिन्तन से, उनकी सच्चे अर्थशास्त्र की संकल्पना से उत्तरोत्तर दूर हुए हैं।

गांधी की तस्वीर, गांधी का चश्मा और गांधी के शब्दों का प्रतीकों की तरह इस्तेमाल करने का अर्थ गांधी के विचारों पर चलना नहीं होता। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि गांधी की बातों को आप उनके प्रति प्रेम और आदर की वजह से दोहराते हैं या गांधी को छोड़ न पाने की मजबूरी की वजह से। फर्क इससे पड़ता है कि आप उन बातों को, उनकी गहराई को कितना समझते हैं और उस पर कितना अमल करते हैं। आपकी कथनी और करनी का अंतर ही इस बात को अच्छी तरह से स्पष्ट कर देता है।

हमारी आर्थिक नीतियां और हमारे घोषित आर्थिक लक्ष्य लगातार एक-दूसरे के विरोधी होते हैं। एक ओर हम आत्मनिर्भर भारत की बात करते हैं, मगर दूसरी ओर हमारी आर्थिक नीतियां देश की बहुसंख्य जनता को दूसरों पर निर्भर बनाती हैं। हम घरेलू और कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने की बात करते हैं मगर हमारी सारी नीतियां और सारे संसाधन बड़े उद्योगपतियों और कंपनियों के हित साधने के अनुकूल रहते हैं। हमारे किसान अपनी फसल उगाने के लिए लगातार बीज और खाद कंपनियों तथा बैंकों पर निर्भर रहते हैं। अच्छी फसलों के लिए मौसम पर निर्भरता का चक्र तो खैर कभी टूटा ही नहीं, मगर अच्छी फसल के दाम अच्छे मिलें, यह भी कभी किसान के हाथ में नहीं रहता है। बाजार पर हद से ज्यादा निर्भरता अक्सर उसे आत्महत्या के कगार पर ले जाती है।

स्वतंत्रता के बाद से ही हमने गाँवों को

आत्मनिर्भर बनाने के गांधी के आग्रह के विपरीत बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने की नीतियां अपनायीं। गांधी इस औद्योगीकरण के हमेशा खिलाफ रहे। उन्हें कभी नहीं लगा कि देश की गरीबी का इलाज उद्योगों के विकास में है। इसके विपरीत उन्होंने 12 नवंबर 1931 को यंग इंडिया अख़बार में मानो भविष्यवाणी करते हुए लिखा - मुझे भय है कि उद्योगवाद मानव-जाति के लिए अभिशाप बन जाने वाला है। उद्योगवाद सर्वथा इस बात पर निर्भर है कि आप में शोषण करने की कितनी शक्ति है। गांधी शोषण की इसी वृत्ति के हमेशा खिलाफ रहे।

गांधी को मशीनों का विरोधी माना जाता रहा है। मगर सच तो यह है कि गांधी मशीनों के अविवेकपूर्ण इस्तेमाल के विरोधी थे। जिन मशीनों से मनुष्य के समय और परिश्रम की बचत हो, उनसे उन्हें गुरेज नहीं था। उनका विरोध उन मशीनों से था, जो लोगों के हाथ का रोजगार छीनती हों। उनका स्पष्ट मानना था कि यंत्रों का वही उपयोग उचित है, जो सबकी भलाई के लिए हो। इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं - 'मुझे आपत्ति स्वयं मशीनों पर नहीं, बल्कि उनके लिए पागल बनने पर है। यह पागलपन श्रम बचाने वाले यंत्रों के लिए है। लोग श्रम बचाने में लगे रहते हैं और दूसरी ओर हजारों लोगों को बेकार करके भूख से मरने के लिए छोड़ दिया जाता है। आज तो मशीनें मुट्ठी भर लोगों को करोड़ों की पीठ पर सवार होने में मदद करती हैं। इस सबके पीछे प्रेरक शक्ति श्रम बचाने की उदात्त भावना नहीं, बल्कि लोभ है।'

विरोधाभास देखिए कि आज मेक इन इंडिया की मुहिम भारत को आत्मनिर्भर बनाने से ज्यादा भारत को दुनिया भर की वस्तुओं के निर्माण का केंद्र –मैन्युफेक्चरिंग हब– बनाने के लिए है। आज यह बात किसी से छुपी नहीं है कि वस्तुओं के निर्माण में व्यक्तियों की भागीदारी तेजी से घट रही है और अब यह न्यूनतम स्तर पर पहुँच गई है। इसलिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भारत में उद्योग लगाने का यह अर्थ कतई नहीं होगा कि इससे बड़ी संख्या में भारत के लोगों को रोजगार मिलेगा। कोई भी कंपनी भारत में तभी उद्योग लगाएगी, जब उसे अन्य प्रतिस्पर्धियों के मुकाबले भारत में उत्पादन सस्ता पड़े। इसका सीधा-सा अर्थ भारत के श्रम का शोषण और भारत के संसाधनों का दोहन है, जिससे बड़ी संख्या में मुनाफा ये बहुराष्ट्रीय कंपनियां कमाएंगी। इससे भारत के पर्यावरण का जो भयानक नुकसान होगा, इसकी ओर तो किसी का ध्यान ही नहीं जा रहा है।

गाँवों की अपनी जरूरत का अधिकांश सामान गाँव में उत्पादित हो, इसकी पैरवी करने वाले गांधी क्या कभी दूसरे देशों में बेचे जाने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा तमाम वस्तुओं के भारत में उत्पादन का समर्थन करते?और बात सिर्फ बहुराष्ट्रीय कंपनियों की ही नहीं है, भारत की कोई कंपनी या उद्योगपति यह करता तो भी गांधी इसका विरोध ही करते। वे कहते हैं कि चन्द लोगों के हाथ में धन और सत्ता का केंद्रीकरण करने के लिए यंत्रों के संघटन को मैं बिलकुल गलत समझता हूँ।गांधी की करुणा और चिंता में सिर्फ भारत के लोग ही नहीं हैं, संपूर्ण मानव-जाति उसकी परिधि में आती है।

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था का आदर्श चंद लोगों के अधिकतम विकास में न होकर सभी लोगों के ज्यादा से ज्यादा विकास में है। दुर्भाग्य से पूंजीवादी अर्थव्यवस्था इसके ठीक उलट काम करती है। पिछले तीस सालों का हमारा अनुभव इस बात की ताकीद करता है। आँकड़ों में चाहे इस बात का दावा किया जाए कि पिछले पंद्रह-बीस सालों में भारत में गरीबों की संख्या में कमी आई है, मगर इन आँकड़ों के पीछे के इस सच को भी हमें ध्यान में रखना चाहिए कि हमारी सरकार के मापदंडों के हिसाब से भारत में एक हजार रुपया महीना खर्च करने वाला व्यक्ति गरीब नहीं माना जाता।

पूंजीवाद किसी भी समय सर्वसामान्य के लिए कल्याणकारी हो सकता है, यह कभी न पूरा होने वाला दिवास्वप्न है। जिसके केंद्र में मुनाफे का लोभ हो, वह किसी भी स्थिति में जनहितकारी नहीं हो सकता। अधिकतम मुनाफे के लिए व्यक्तियों का अधिकतम शोषण और संसाधनों के अधिकतम दोहन के माध्यम से अधिकतम उत्पादन, उस अधिकतम उत्पादन के लिए कृत्रिम जरूरतों का निर्माण और उन जरूरतों की पूर्ति के लिए मनुष्य का मशीनों में बदल जाना – यह पूंजीवाद और मशीनीकरण का एक ऐसा दुष्चक्र है, जिसमें फँसने के बाद सही सलामत बाहर निकलना मुश्किल हो जाता है।

तो फिर कैसी हो किसी भी देश की अर्थव्यवस्था? यदि आप गांधी से पूछेंगे तो वे कहेंगे - मेरी राय में भारत की – न सिर्फ भारत की, बल्कि सारी दुनिया की –अर्थरचना ऐसी होना चाहिए कि किसी को भी अन्न और वस्त्र के अभाव की तकलीफ न सहनी पड़े। ... और यह आदर्श निरपवाद रूप से तभी कार्यान्वित किया जा सकता है, जब जीवन की प्राथमिकता आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में रहें। किसी भी हालत में वे दूसरों के शोषण के लिए चलाए जाने वाले व्यापार का वाहक न बनें। किसी भी देश या समुदाय का उन पर एकाधिकार अन्यायपूर्ण होगा। हम आज न केवल अपने इस दुखी देश में बल्कि दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी जो गरीबी देखते हैं, उसका कारण इस सरल सिद्धांत की उपेक्षा ही है।

गांधी ने 73 साल पहले 01 जून 1947 के हरिजन में जो लिखा, वह आज की स्थितियों में भी किस तरह पूरी तरह से लागू होता है, यह देखना अचरज भरा है। गांधी कहते हैं - आज तो बहुत ज्यादा और इसलिए बहुत भद्दी आर्थिक असमानता है। अन्यायपूर्ण असमानताओं की इस हालत में, जहाँ चंद लोग मालामाल हैं और सामान्य प्रजा को भरपेट खाना भी नसीब नहीं होता, रामराज्य कैसे संभव हो सकता है?

यदि कोई भी सरकार सचमुच इस देश का, इस देश के सभी लोगों का हित चाहती है तो दुनिया के किसी भी आर्थिक मॉडल की जगह उसे गांधी के सुझाये सर्वोदय के मॉडल को अपनाना होगा। देश को दुनिया भर की चीजों के उत्पादन का केंद्र बनाने के सपने की जगह, इस देश के हर गाँव को मजबूत और आत्मनिर्भर बनाना होगा। ऐसा न करके सिर्फ गांधी के आर्थिक चिन्तन की बात करना या इस देश में रामराज्य की पैरवी करना ढोंग से ज्यादा कुछ भी नहीं है। ❑

खोट गांधी की प्रासंगिकता में नहीं, हमारे साहस में है !

❑ श्रवण गर्ग

हम डर रहे हैं यह स्वीकार करने से कि हमें गांधी की अब ज़रूरत नहीं बची है।ऐसा इसलिए नहीं कि गांधी अब प्रासंगिक नहीं रहे हैं, वे अप्रासंगिक कभी होंगे भी नहीं। हम गांधी की ज़रूरत को आज के संदर्भों में अपने साहस के साथ जोड़ नहीं पा रहे हैं।राजनीतिक परिस्थितियों के साथ समझौते करते हुए हम उनके होने की नैतिक ज़रूरत को ख़त्म होता हुआ चुपचाप देख रहे हैं। उसे अपनी मौन और अनैतिक स्वीकृति भी प्रदान कर रहे हैं।परेशानी अब केवल इस बात की ही बची है कि गांधी की ज़रूरत को लेकर हम अपनी इस हक़ीक़त को सार्वजनिक रूप से कैसे स्वीकार करें? डर इस बात का है कि अगर हम भी ऐसा ही कर लेंगे तो इतिहास हमें भी उन लोगों के साथ नत्थी कर देगा, जो गांधी के पुतलों में खून जैसी शक्ल का रंग भरकर कैमरों के सामने गोलियाँ दाग रहे हैं और अपनी इस क्रूरता पर तालियाँ भी बजा रहे हैं।

किसी आधुनिक किस्म के मेहमान के घर में प्रवेश की सूचना मात्र से ही जिस तरह हम 'पिता' को पीछे के कमरों में धकेल देते हैं, राज्य की या समाज की हिंसा की आहट मात्र से ही हम 'राष्ट्रपिता' को भी उनके आश्रमों और किताबों में क़ैद कर देते हैं। ऐसा आए दिन हो रहा है। जिस राज्य ने अहिंसा के नाम पर हिंसा को ही अपनी ताक़त बना लिया है, हम उसे ही लगातार कोसते रहते हैं कि वह 'गांधी मार्ग' से भटक गया है। वह भटका नहीं है, उसने गांधी मार्ग के समानांतर एक नये और आधुनिक मार्ग का निर्माण कर लिया है।नागरिकों ने 'राष्ट्रपिता' की देखभाल का काम भी सरकारों के जिम्मे उसी तरह से कर दिया है, जिस तरह से पिता या परिवार के किसी अन्य ग़ैरज़रूरी बन चुके व्यक्ति को वृद्धाश्रमों के हवाले कर दिया जाता है। इनमें सरकारी अनुदानों पर पेट भरने वाली वे गांधीवादी संस्थाएँ भी शामिल हैं, जिनके ऊपर गांधी के काम को जिंदा रखने की नैतिक जिम्मेदारी है।

जब मैं यह कहता हूँ कि गांधी की अब हमें ज़रूरत नहीं रही तो उसका आशय यह है कि हमने उसे (ज़रूरत को) अपने ही तात्कालिक राजनीतिक-साम्प्रदायिक स्वार्थों के चलते जानते-बूझते समाप्त कर दिया है। पहली बार ऐसा चौदह अगस्त, 1947 को पाकिस्तान नामक पृथक राष्ट्र के उदय के साथ हुआ था। दूसरी बार 25 जून, 1975 को उस कांग्रेस के हाथों हुआ, जिसने गांधी की अगुआई में स्वतंत्रता हासिल की थी और तीसरी बार मर्यादा पुरुषोत्तम राम की अयोध्या में छः दिसम्बर, 1992 को बाबरी ढाँचे के हिंसक विध्वंस के रूप में उन्हीं शक्तियों द्वारा किया गया, जिन्होंने 1975 के आपातकाल के खिलाफ़ अहिंसक संघर्ष में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में सक्रिय भागीदारी निभाई थी।अंतिम बार की समाप्ति पर तो हाल में 30 सितम्बर को अदालत की मोहर भी लग गई। अब तो सत्ता की नई 'अयोध्याओं' पर निशान लगाए जा रहे हैं।

हम इस सच्चाई का सामना करने से कन्नी काट रहे हैं कि जिन शक्तियों को आत्मघाती दस्तों के रूप में गांधी विचार का उसके मूल से उन्मूलन करने के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा है, उनके मन में साध्य की प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता को लेकर किसी भी प्रकार का द्वंद्व नहीं है।गांधी की ज़रूरत भी यहीं पहुँचकर दम तोड़ देती है। ये ताक़तें उनके द्वारा ही प्रतिपादित और संपोषित 'राष्ट्रवाद' और 'देशप्रेम' के नाम पर अपना सब कुछ छोड़ने और मार्ग के तमाम अवरोधों का विध्वंस करने के लिए तैयार हैं।

गांधी की ज़रूरत के प्रति एक ईमानदार अभिव्यक्ति की पहली शर्त ही यही है कि हम इन हिंसक आत्मघाती दस्तों का अहिंसक और शांतिपूर्ण तरीक़ों से प्रतिकार करने के लिए अपने शरीरों के प्रति आसक्ति से उस तरह मुक्त होने को तैयार हैं या नहीं, जिसे गांधी ने अपने सत्य के प्रयोगों के ज़रिए सिद्ध किया था! हम गांधी के कंधों पर सवार होकर दुनिया को और ज्यादा दूरी तक देखना चाहते हैं या उनका इस्तेमाल केवल एक ताबीज़ की तरह करना चाहते हैं? पिछले सात दशकों में हम केवल गांधी के पुतले ही बनाते रहे हैं।उन्हें चौराहों पर स्थापित करते रहे हैं। उन्हें साम्प्रदायिक हमलों का निशाना बनते देखते रहे हैं, पर उनका कोई 'क्लोन' नहीं निर्मित कर पाए। 'क्लोन' से तात्पर्य गांधी की किसी कृत्रिम शारीरिक प्रतिकृति से नहीं है, इस बात से है कि अब केवल हाड़-माँस का एक गांधी या वह गांधी जो काफ़ी पीछे छूट गया है, ही हमारी उम्मीद नहीं बन सकता। अब हमें बिना किसी गांधी के ही काम चलाना होगा और हम ऐसा करने से ख़ौफ़ खा रहे हैं।

अमेरिका में अश्वेतों का जो आंदोलन इस समय चल रहा है, उसका गांधीवादी मार्टिन लूथर किंग कौन है, किसी को भी जानकारी नहीं है।वहाँ प्रत्येक अश्वेत (और श्वेत भी) उस विभाजनकारी और साम्प्रदायिक सवर्णवाद का विरोध कर रहा है, जिसके गांधी खिलाफ़ थे।अगर हम में से कुछ लोग केवल अन्याय, शोषण, ग़ैर-बराबरी, साम्प्रदायिक हिंसा और मानवाधिकारों के हनन के खिलाफ़ अपना मौन प्रतिकार भी प्रारम्भ कर दें तो गांधी की प्रासंगिकता को एक अनिवार्य ज़रूरत में बदल सकते हैं; और इसकी ज़रूरत प्रत्येक क्षण उपस्थित हो रही है, गांधी के जमाने से भी कहीं बहुत ज्यादा। ऐसा भी नहीं है कि हम उसे देख नहीं पा रहे हैं ! हमें केवल अपने दिल के किसी कोने से यह महसूस होना बाक़ी है कि हम गांधी और उसके विचारों की आत्मा के साथ हैं, उन ताक़तों के साथ नहीं जो प्रत्येक क्षण उनकी हत्या कर रहे हैं!

हिंसा की व्यवस्था पर चलने वाली सत्ताओं की सैन्य ताक़त की असली परीक्षा तो केवल युद्ध की परिस्थितियों में ही हो सकती है, पर गांधी की शक्ति और उनकी प्रासंगिकता का परीक्षण तो हर समय और वर्तमान के असामान्य और हिंसा से भरे माहौल में भी हो सकता है ।उसके लिए केवल उनके विचारों में आस्था रखने वाले लोगों में साहस की ज़रूरत है। खोट गांधी की प्रासंगिकता में नहीं, हमारे साहस में है। ❑

निमंत्रण

सर्व सेवा संघ का 88वां अधिवेशन

सर्व सेवा संघ का 88वां अधिवेशन **28-29 नवम्बर 2020 (शनिवार-रविवार)** को **सेवाग्राम, जि. वर्धा (महाराष्ट्र)** में श्री चंदन पाल, कार्यकारी अध्यक्ष की अध्यक्षता में होगा। उसके अनुसार आप सेवाग्राम पहुंचने का कार्यक्रम बनायेंगे। कोरोना संकट के कारण परिवहन सेवा को ध्यान में रखते हुए आरक्षण टिकट थोड़ा जल्दी बनायेंगे तो कोई दिक्कत नहीं होगी।

अधिवेशन स्थल : कस्तूरबा हेल्थ सोसायटी, नया सभागृह, सेवाग्राम–442102, वर्धा (महाराष्ट्र)

अधिवेशन समय : अधिवेशन का उद्घाटन 28.11.2020 को दोपहर 2.30 बजे होगा और अगला सत्र 29.11.2020 को प्रातः 10.00 बजे से आरम्भ होगा।

चुनाव अधिकारी : कार्यसमिति ने सर्व सम्मति से **श्री भवानी शंकर कुसुम** को सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष के चुनाव हेतु चुनाव अधिकारी नियुक्त किया है।

मतदाता सूची का प्रकाशन : चुनाव अधिकारी के पत्र संख्या 383/2019-2020, दिनांक 26.02.2020 के द्वारा सूचित किया गया था कि सभी जानकारी वेबसाइट पर उपलब्ध करा दी जायेगी, जो मार्च 2020 से वेबसाइट पर उपलब्ध है। सूची चुनाव अधिकारी के पास भी उपलब्ध है।

विचारणीय विषय :

1. दिवंगतों को श्रद्धांजलि
2. रायपुर में संपन्न 87वें अधिवेशन की कार्यवाही की पुष्टि
3. वर्तमान राष्ट्रीय परिस्थिति पर विचार
4. कार्यकारी अध्यक्ष की रिपोर्ट
5. वर्ष 2018-2019 की ऑडिट रिपोर्ट
6. प्रदेश सर्वोदय मंडलों/मित्र मंडलों एवं समितियों की रिपोर्ट
7. सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का निर्वाचन
8. अध्यक्ष की अनुमति से अन्य विषय

कैसे पहुंचें :

- देश के करीब-करीब सभी मुख्य स्थानों से सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) के लिए सीधी गाड़ियां हैं। सीधी आने वाली गाड़ियों से आने में सुविधा होगी। आने-जाने का अपना टिकट तत्काल बुक करवा लीजिये, क्योंकि लॉकडाउन के कारण ट्रेनें कम संख्या में चल रही हैं।
- वर्धा रेलवे स्टेशन से अधिवेशन स्थल करीब 8 कि.मी. तथा सेवाग्राम रेलवे स्टेशन से करीब 6 कि.मी. की दूरी पर है। स्टेशन के बाहर से किराये पर ऑटो मिलता है, ऑटो का भाड़ा प्रति ऑटो करीब रु.125-150 होता है।
- दूरी से आने वाले साथियों के लिए यात्री निवास, सेवाग्राम आश्रम तथा नई तालीम परिसर, सेवाग्राम, जि.वर्धा में व्यवस्था की गयी है।
- पंजीकरण : प्रतिनिधि शुल्क रु.100/- प्रति व्यक्ति।

पंजीकरण : पंजीकरण काउंटर नई तालीम में है। अगन्तुकों से अनुरोध है कि वहां पंजीकरण करायें। यहीं से आपको आपके निवास की जानकारी दी जायेगी।

नोट :

- आपसे अनुरोध है कि आप अपने साथ ओढ़ने-बिछाने के लिए चादर साथ लायें।
- अपने पहुंचने की सूचना कार्यालय को **अवश्य** देंगे ताकि व्यवस्था करने में अनुकूलता रहे।

संपर्क :

1. श्री शिवचरण सिंह ठाकुर, अध्यक्ष, महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल, मो. 09423657721
2. श्री सचिन उगले, सर्व सेवा संघ महादेवभाई भवन, सेवाग्राम, मो.7620277735

अशोक कुमार शरण
प्रबन्धक ट्रस्टी

चंदन पाल
कार्यकारी अध्यक्ष

निर्वाचन कार्यक्रम

28-29 नवम्बर 2020 को सेवाग्राम में आयोजित सर्व सेवा संघ के 88वें अधिवेशन में लोकसेवकों तथा सदस्यों की भागीदारी और अनुकूलता को ध्यान में रखते हुए अध्यक्ष के निर्वाचन का कार्यक्रम इस प्रकार है—

1. नामांकन पत्र की प्राप्ति

- प्रधान कार्यालय, सेवाग्राम से :
  3-5 नवम्बर : 11.00 से 16.00 बजे
- अधिवेशन कैम्प कार्यालय से :
  28 नवम्बर : 09.00 से 12.00 बजे

2. निर्धारित प्रपत्र में नामांकन पत्र दाखिल करना
28 नवम्बर : 16.00 से 19.00 बजे

3. नामांकन पत्रों की जांच
28 नवम्बर : 20.00 से 21.00 बजे

4. उम्मीदवारों की सूची का प्रकाशन
28 नवम्बर : 21.15 बजे

5. नाम वापसी
29 नवम्बर : 09.00 से 12.00 बजे

6. उम्मीदवारों की अंतिम सूची का प्रकाशन
29 नवम्बर : 01.00 बजे

7. आवश्यक होने पर निर्वाचन
29 नवम्बर 2020 को अधिवेशन के दूसरे सत्र में (2.30 बजे से)

नोट : मतदाता मत-पत्र प्राप्त करने के लिए कृपया परिचय पत्र (मतदाता पहचान पत्र, ड्राइविंग लाइसेंस, पासपोर्ट, आधार कार्ड आदि में से कोई एक) साथ में अवश्य लायें।

संशोधित सूची

सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति के निर्णयानुसार लोकसेवकों तथा मतदाताओं (जिला सर्वोदय मंडलों के अध्यक्षों तथा प्रतिनिधियों एवं सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष द्वारा मनोनीत सदस्यों) की 31 मार्च 2020 तक की संशोधित एवं अंतिम सूची का प्रकाशन सर्व सेवा संघ की वेबसाइट https://www.sarvasevasangh.in पर किया गया है।

-भवानी शंकर कुसुम
चुनाव अधिकारी

बतख मियाँ न होते तो गांधी युग भी न होता

❑ मो. आरिफ

भारत की आज़ादी के आंदोलन की वैश्विक पहचान के पीछे महात्मा गांधी का महत्वपूर्ण व्यक्तित्व है और आज उनका जन्मदिन अहिंसा दिवस के रूप में पूरी दुनिया में मनाया जाता है। 1917 में स्थानीय किसानों की समस्या को देखने समझने के लिए गांधी चंपारण आये।गांधी का चंपारन प्रवास उनके जीवन कर्म में मील का पत्थर साबित हुआ। इसी दौरान अंग्रेजों ने गांधी जी के क़त्ल की साज़िश भी रची थी पर बतख मियाँ नामक एक खानसामे ने अपनी जान जोखिम में डाल कर उन्हें बचा लिया।यह ऐतिहासिक प्रकरण इतिहास के पन्नों में कहीं खो गया।इतिहासकारों से लेकर चंपारण की गाथा सुनाने वालों को भी यह नाम मुश्किल से याद रहता है।अंग्रेजों का इरादा एक मुस्लिम ख़ानसामे को मोहरा बनाकर पूरे देश को साम्प्रदायिक दंगों की भट्ठी में झोंक देने का था।

बतख मियां, जैसा कि नाम से ही ज़ाहिर है, पसमांदा थे। मोतीहारी नील कोठी में ख़ानसामे का काम करते थे। यह 1917 की बात है। उन दिनों गांधी नील किसानों की समस्या समझने के लिए चंपारण के इलाके में भटक रहे थे। यह वही 1917 का समय था, जब रोहतास (तब शाहाबाद) ज़िले के गांवों में साम्प्रदायिक उन्माद में डूबी सामन्ती ताकतों ने हाथी-घोड़ों पर सवार होकर मुस्लिम बस्तियों पर हमले किए थे। आगे चलकर, कई अन्य स्थानों पर भी साम्प्रदायिक दंगों का फैलाव हुआ।

बहार हुसैनाबादी (1864-1929) ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि एक रोज़ गांधी जी मोतीहारी कोठी के मैनेजर इरविन से मिलने पहुँच गए। उन दिनों भले ही गाँधी जी की देश के अन्य बड़े नेताओं जैसी ख्याति नहीं थी, पर चंपारण के लोगों की निगाह में वे किसी मसीहा से कम न थे। नील किसानों को लगता था कि वे उनके इलाक़े से निलहे अंग्रेज़ो को भगाकर ही दम लेंगे और यह बात नील प्लांटरों को खटकती थी। वे हर हाल में गाँधी को चंपारण से भगाना चाहते थे। वार्ता के उद्देश्य से नील के खेतों के तत्कालीन अंग्रेज़ मैनेजर इरविन ने मोतीहारी में उन्हें रात्रिभोज पर आमंत्रित किया। तब बतख मियां इरविन के रसोइया हुआ करते थे। इरविन ने गांधी की हत्या के लिए बतख मियां को ज़हर मिला दूध का गिलास देने का आदेश दिया।अंग्रेजों की योजना थी कि बतख अंसारी के हाथों गांधी जी को दूध में ज़हर देकर मार दिया जाए। ऐसा न करने पर बतख मियाँ को जान से हाथ धोने की धमकी भी दी गई। निलहे किसानों की दुर्दशा से व्यथित बतख मियां को गांधी में उम्मीद की किरण नज़र आ रही थी। उनकी अंतरात्मा को इरविन का यह आदेश कबूल नहीं हुआ। उन्होंने दूध का गिलास देते हुए राजेन्द्र प्रसाद को बता दिया कि इसमें जहर मिला हुआ है, आप गाँधीजी को सावधान कर दें।

देशभक्त बतख अंसारी ने अंग्रेजों का दमन और अत्याचार झेलने का संकल्प किया और गांधी जी को अंग्रेजों की इस साज़िश से आगाह कर दिया। कहते हैं, दूध का गिलास ज़मीन पर उलट दिया गया और एक बिल्ली उसे चाटकर मौत की नींद सो गई। गांधी की जान तो बच गई लेकिन बतख मियां और उनके परिवार को बाद में इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी।गांधी जी के जाने के बाद अंग्रेजों ने न केवल बतख मियां को बेरहमी से पीटा और सलाखों के पीछे डाला, बल्कि उनके छोटे से घर को भी ध्वस्त कर क़ब्रिस्तान बना दिया।

गांधीजी की मौत या जन्म पर लोग उनको याद करते हैं, साथ ही गोडसे को भी हत्यारे के रूप में याद किया जाता है, मगर बतख मियां लगभग गुमनाम ही रहे। इस लोकोक्ति के बावजूद कि 'बचाने वाला मारने वाले से बड़ा होता है'। मारने वाले का नाम हर किसी को याद है, बचाने वाले को कम लोग ही जानते हैं। देश की आज़ादी के बाद 1950 में मोतीहारी यात्रा के क्रम में देश के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने बतख मियां की खोज खबर ली और प्रशासन को उन्हें कुछ एकड़ जमीन आवंटित करने का आदेश दिया।

बतख मियां की लाख भागदौड़ के बावजूद प्रशासनिक सुस्ती के कारण वह जमीन उन्हें नहीं मिल सकी। निर्धनता की हालत में ही 1957 में उन्होंने दम तोड़ दिया। राजेन्द्र प्रसाद ने 1950 से अपनी मृत्यु तक बिहार सरकार को गांधी की जान बचाने वाले इस देशभक्त को अंग्रेज़ों द्वारा छीनी गई ज़मीन लौटाने और उनके बेटे मुहम्मद जान अंसारी समेत पूरे परिवार को आर्थिक संरक्षण देने का निर्देश दिया था। वे बतख मियां की देशभक्ति से अभिभूत थे। बाद में, राष्ट्रपति भवन में बतौर ख़ास मेहमान उनके बेटे को परिवार सहित रखा गया था। चंपारण में उनकी स्मृति अब मोतीहारी रेलवे स्टेशन पर बतख मियां द्वार के रूप में ही सुरक्षित है। इतिहास ने स्वतंत्रता संग्राम के एक गुमनाम योद्धा बतख मियां अंसारी को भुला दिया।

1990 में, राज्य अल्पसंख्यक आयोग ने पहली बार इस पूरे प्रकरण को उजागर किया और प्रमाण सहित बतख मियां के वंशजों को न्याय दिलाने की कारगर पहल की। तब कहीं मीडिया का ध्यान इस ओर गया और देश-भर के समाचार-माध्यमों में उनका नाम उछला। बाद में, विधान परिषद के प्रभावकारी हस्तक्षेप से बतख मियाँ के गांव में उनका स्मारक बना, उनकी याद में ज़िला मुख्यालय में 'संग्रहालय' का निर्माण किया गया तथा कुछ ज़मीन के साथ ही तमाम वायदे किये गए जो अभी पूरे होने बाक़ी हैं। उनके नाम पर स्थापित 'संग्रहालय' पर अर्द्ध-सैनिक बलों का कब्जा रहा है।

एक सवाल अक्सर दिमाग़ को परेशान करता है कि देश की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली इस घटना के कई लोग गवाह थे, फिर भी बतख अंसारी की देशभक्ति की यह दास्तान गुमनामी के पर्दे में दबी रह गई। आख़िर ऐसा क्यों?

गांधी को मारने वाला गोडसे याद है और आज उसकी संतानें फल फूल रही है, लेकिन उन्हें बचाने वाले बतख मियां को हमने न केवल भुला दिया, बल्कि आज उनकी तहरीक ही संकटग्रस्त है। गांधी न होते, तो शायद देश की आजादी का स्वरूप कुछ दूसरा होता और अगर बतख मियाँ न होते तो गांधी युग भी न होता। ❑

टाना भगत और गांधीजी

❑ डॉ. सुखचन्द्र झा

दक्षिण अफ्रीका में 'सत्य और अहिंसा' के सफल परीक्षण के पश्चात महात्मा गांधी 1915 में भारत लौटे। इसी समय झारखंड (तब बिहार का हिस्सा) के चिंगरी गाँव में एक चिंगारी फ़ैली जो 'टाना भगत' आन्दोलन के नाम से देश के इतिहास में दर्ज है। नियति ने इस आन्दोलन का बापू के सत्य और अहिंसा से ऐसा संगम प्रस्तुत कर दिया कि टाना भगत स्वाधीनता संग्राम के अमिट हस्ताक्षर बन गए।

टाना भगत आन्दोलन के प्रणेता जतरा उरांव का जन्म 1888 ई. में गुमला जिले के विष्णुपुर थाने के चिंगरी नवाटोली गाँव में हुआ। तंत्र मन्त्र के प्रशिक्षण के बीच उन्हें आत्म बोध हुआ। 14 अप्रैल 1914 को उन्होंने घोषणा की कि उरांव जनजाति के देवता, धर्मेश ने उनको सन्देश दिया है कि वे राजा बनेंगे और उनके राज्य में उनके अनुयायी ही रह पाएंगे। उनको न मानने वाले गूंगे हो जाएंगे। उनकी मुख्य शिक्षा थी; भूत-प्रेत, झाड़-फूंक आदि अंध विश्वासों का परित्याग, बलि प्रथा निषेध , मांस मदिरा का त्याग, दूसरी जाति और सरकार की नौकरी की मनाही, घरेलू तथा कृषि उपकरणों एवं आभूषणों का नदी में प्रवाह तथा उरांव देवता धर्मेश की उपासना। नवम्बर 1914 के आते आते जतरा ने भूत प्रेत के निष्कासन के साथ साथ हिन्दू, मुस्लिम, मिशनरी, सरकारी पुलिस से मुक्ति का सन्देश भी अपने उपदेश में शामिल कर लिया। 1915 तक इस आन्दोलन का प्रसार हजारीबाग और पलामू जिलों में हो गया और 1916 में इसकी आंच जलपाईगुड़ी के चायबागानों तक पहुँच गयी, जहां बड़ी संख्या में उरांव मजदूर रहते थे। इस आन्दोलन से स्थानीय जमींदार, ठेकेदार और सरकारी अधिकारियों को परेशानी होने लगी। फलस्वरूप अपने अनुयायियों को मजदूरी करने से रोकने के आरोप में जतरा और उनके सात समर्थकों को अनुमंडलाधिकारी द्वारा एक वर्ष की जेल की सजा हुई। बाद में उनको इस शर्त पर रिहा किया गया कि वह अपने संदेशों का प्रचार नहीं करेंगे और शांति बहाल रखेंगे। जेल से मुक्त होने के दो मास बाद ही जेल की यातना के कारण उनकी मृत्यु हो गयी। जतरा भगत के निधन के बाद देवमनिया, शीबू, माया, बलराम और भीखू नामक उनके शिष्यों ने अपने अपने क्षेत्रों में उनके आन्दोलन का नेतृत्व किया। फलस्वरूप रांची, लोहरदगा, गुमला, पलामू और हजारीबाग के करीब ढाई लाख उरांव इस आन्दोलन से जुड़ गए। मार्च 1919 में शीबू, माया, सुकरा, सिंघा और देविया को गिरफ्तार कर सजा दी गयी, फिर भी आन्दोलन का अंत नहीं हुआ। दिसम्बर 1919 में तुरिया भगत और जीतू भगत के नेतृत्व में कुरु थाना के टिको नामक स्थान पर करीब 400 टाना भगतों की सभा हुई, जिसमें लगान और चौकीदारी कर न देने का प्रस्ताव पारित किया गया।

असहयोग आन्दोलन के समय से टाना भगत आन्दोलन गांधीजी के प्रभाव में आने लगा। कांग्रेस के विशेष अधिवेशन (सितम्बर 1920) में अनेक टाना भगत पलामू जिले से गांधीजी को सुनने के लिए पैदल ही कलकत्ता पहुँच गए। 1921 के प्रारंभ में जब असहयोग आन्दोलनकारी रांची, सेन्हा, मधुकम, इटकी ओरमाझी, कोकर, गुमला, कुरु, तमाड़, बुंडू आदि ग्रामों में सभा करने लगे तो ब्रिटिश अधिकारियों के कान खड़े हुए। रांची एसपी ने उपायुक्त को लिखा, 'पंद्रह दिनों की अवधि में 15 सभाएं हो चुकी हैं और तीन होने वाली हैं। मेरा अनुमान है कि इससे तीव्र गति से आक्रोश फैलेगा। इसे रोकने के लिए धारा 144 पर्याप्त नहीं है। मेरे विचार में सभी सभाओं पर, विशेषतया टाना भगत बहुल मांडर, कुरु और लोहरदगा की सभाओं पर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए। पुनः 9 मार्च 1921 को रांची के उपायुक्त ने छोटा नागपुर के कमिश्नर को लिखा कि असहयोग आन्दोलन से जुड़कर टाना भगतों ने अपने आन्दोलन को नया जीवन प्रदान किया है। सरकारी चिंता और चेतावनी के बावजूद 12 अप्रैल 1921 को टाना भगतों के गढ़, कुरु में करीब तीन हजार लोगों की सभा को रामटहल ब्रह्मचारी और मुस्लिम नेताओं ने संबोधित किया। लोगों को चरखा चलाने,शराब न पीने और हिंसा से दूर रहने का सन्देश दिया गया। अब भोले भाले आदिवासियों के मन में गांधीजी की दैवीय छवी समा गयी थी। उनको लगता था कि गांधीजी बिना शस्त्र और सेना के अंग्रेजों को परास्त कर धर्म का राज स्थापित करेंगे। सरकारी रपट के अनुसार भी स्थानीय लोग मानने लगे थे कि गांधी का राज आ गया है। अब चौकीदारी और अन्य कर देने की जरूरत नहीं है।

गांधी के वशीभूत ये टाना भगत अब झारखंड में कांग्रेस की ताकत बन गए। खादी पहनना, कांग्रेस के झंडे के साथ मीलों पैदल चलकर कांग्रेस की सभा में भाग लेना ,गांधीजी और कांग्रेस के संदेशों को जन जन तक पहुंचाना इनकी दिनचर्या में शामिल हो गया। 1922 की गया कांग्रेस में कुल 800 प्रतिनिधि गया पहुंचे, जिनमें भारी संख्या में टाना भगत और मुंडा शामिल थे। करीब 400 भगत और अन्य आदिवासी तो बहंगियों में हांड़ी और जलावन लेकर पैदल ही चले गए थे। डॉ. राजेंद्र प्रसाद उनके सम्बन्ध में अपनी आत्मकथा में लिखते हैं, 'कांग्रेस में इनकी इतनी श्रद्धा इतनी बढ़ गयी थी कि उसके नाम पर वे सब कुछ करने को तैयार रहते थे। कभी कभी नासमझी का काम भी कर दिया करते थे। उनको अहिंसा का अर्थ किसी ने यह बता दिया कि बकरियां मांस के लिए पाली जाती हैं, तो उनका पालना भी ठीक नहीं है। नतीजा यह हुआ कि हजारों बकरियों को उन्होंने यों ही जंगलों में छोड़ दिया। उनसे किसी ने कहा कि कांग्रेस के पांडाल में मिट्टी भरने का काम पूरा नहीं हो रहा है। बस वे सब इस काम में लग गए। दिन रात काम करके दो दिनों के भीतर सब काम पूरा किया। हम सब लोग उनके उत्साह और परिश्रम से चकित रह गए। स्वागत समिति की ओर से उनमें से प्रत्येक को एक गांधी टोपी और स्वागत समिति की मेम्बरी का एक फूल दिया गया। 1922 में बापू की

गिरफ्तारी के बाद जब असहयोग कार्यकर्ताओं के खिलाफ दमन का दौर शुरू हुआ तो बेरो थाना और कुछ अन्य स्थानों पर टाना भगत भी उसके शिकार हुए।

1925 में गांधीजी बिहार प्रांतीय कांग्रेस के पुरुलिया सम्मलेन में पधारे। वहां से उनकी छोटा नागपुर यात्रा शुरू हुई। चक्रधरपुर और चाईबासा में जनसभाओं को संबोधित कर वह रांची के लिए रवाना हुए हो गए। रास्ते में वह थोड़ी देर के लिए खूँटी में रुके, जहाँ उनकी भेंट मुंडा और टाना भगतों से हुई, जिनकी सादगी और निर्दोषता देख कर वह मंत्रमुग्ध हो गए। बापू के शब्दों में, 'वे खादी में विश्वास करते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों चरखा चलाते हैं और स्वनिर्मित खादी पहनते हैं। कई लोग कंधों पर चरखा लिए मीलों पैदल चलकर आए थे। मैंने सभास्थल पर करीब 400 भगतों को देखा, जो लगन से चरखा चला रहे थे। वे अपने भजनों का समूह गान भी करते हैं।

1926 में कांग्रेस का राष्ट्रीय सप्ताह समारोह (6-13 अप्रैल) हो या खादी प्रदर्शनी (5 अक्टूबर, आर्य समाज हॉल, रांची) टाना भगत हर जगह होठों पे गांधी और हाथों में तिरंगा लेकर मौजूद रहते थे। 1927 में साइमन कमीशन के खिलाफ प्रदर्शन में (रांची, दिसंबर) टाना भगतों ने भाग लिया तो 1928 की कलकत्ता कांग्रेस में करीब 150 टाना भगत उपस्थित हुए। राजनीतिक घटनाओं से परिपूर्ण वर्ष 1930 में 26 जनवरी को रांची में सदर हॉस्पिटल के समीप पी सी मित्र के नेतृत्व में टाना भगतों ने स्वतंत्रता दिवस समारोह का आयोजन किया। रांची में इसी वर्ष जून में 40 भगतों ने बिना अनुमति के जुलूस निकालकर सविनय अवज्ञा आन्दोलन में शिरकत की और आठ भगतों ने गिरफ्तारी दी।

1940 की रामगढ़ कांग्रेस में टाना भगतों ने गांधीजी को 400 रुपये की थैली समर्पित कर राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया तो भारत छोड़ो आन्दोलन का इतिहास भी इनकी चर्चा के बिना अधूरा है। 18 और 22 अगस्त 1942 को टाना भगतों की टोली ने क्रमशः विष्णुपुर थाने को जलाया और इटकी के समीप रेल की पटरियां उखाड़ दीं। 23 अगस्त को चमरा भगत और गोवा भगत भाषण देते हुए गिरफ्तार हुए तो 24 और 28 अगस्त को क्रमशः डाक सामग्री छीनने और बेरमो थाने पर कब्ज़ा करने के आरोप में कुछ टाना भगतों की गिरफ्तारी हुई।

इन टाना भगतों के दो ही आदर्श थे— जतरा भगत और महात्मा गाँधी। जतरा आश्विन शुक्ल अष्टमी को धरती पर आए पर उनके भगतों को उनकी अंगरेजी जन्म तिथि ज्ञात नहीं थी, तो उन्होंने 2 अक्टूबर को ही गांधीजी और जतरा भगत का जन्म दिवस मानना शुरू किया। राष्ट्रपिता के जन्म दिवस के अवसर पर हम टाना भगतों के दोनों आदर्शों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं! ❑

गांधी दर्शन

❑ श्रीप्रकाश

महात्मा गांधी का दर्शन गरीबी, भुखमरी,हिंसा एवं नैतिक पतन के मूल्य से जूझ रहे समाज के लिए प्रकाश के समान है। वर्तमान समय में मानव जाति घोर आर्थिक , सामाजिक एवं सांस्कृतिक संकट से गुजर रही है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरुप समाज के आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया है। वैज्ञानिक खोजों के कारण लोगों के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो गया है। जेम्स वाट के द्वारा भाप के इंजन बनाने से लेकर अंतरिक्ष यान की खोज तक मानव को चंद्रमा एवं अन्य ग्रहों तक रोबोट के माध्यम से पहुंचने में सफलता प्राप्त हुई है। इंटरनेट की खोज ने सारी दुनिया को एक गांव के रूप में परिवर्तित कर दिया है। दुनिया के किसी भी भाग में घटी हुई कोई भी घटना कुछ ही क्षणों में सारे संसार में फ़ैल जाती है। इस तरह से आज का मानव जीवन सुख सुविधाओं से परिपूर्ण हो गया है। दूसरी ओर वैज्ञानिक खोजों के कारण अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं नैतिक समस्याओं से समाज संघर्ष कर रहा है। बड़े बड़े कल-कारखानों का जाल सारी दुनिया में फ़ैल गया है, जिसके संचालन का कार्य या तो सरकार कर रही है या पूंजीपतियों द्वारा किया जा रहा है। एक एक कारखाने में सैकड़ों मजदूर कार्यरत हैं। वे मजदूर गांव में अपने घर को छोड़कर जीविका चलाने के लिए कारखानों में काम करने को मजबूर हैं। इसके फलस्वरूप बड़ी संख्या में मजदूर इकट्ठा हो गये हैं एवं उनके समक्ष आवास, बच्चों को उचित शिक्षा देने की समस्या एवं निम्न जीवन स्तर के कारण कुपोषण की समस्या उत्पन्न हो गई है। कारखानों से निकलने वाले धुएं के कारण पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, जिससे बड़ी संख्या में असमय ही लोगों की मृत्यु भी हो रही है। अमीर और गरीब के बीच खाई भी बढ़ती जा रही है, जो सामाजिक तनाव का प्रमुख कारण है।

आधुनिकता के नाम पर आज नग्नता का खुला प्रदर्शन किया जा रहा है। इन परिस्थितियों में महात्मा गांधी का दर्शन स्मरण आता है। महात्मा गांधी ने कुटीर उद्योग के माध्यम से देश और समाज का विकास करने का रास्ता सुझाया है। कुटीर उद्योगों के द्वारा बड़े पैमाने पर लोगों को रोजगार प्राप्त हो सकता है, जिससे देश एवं समाज से गरीबी की भी समस्या का निराकरण हो जाएगा। अनिवार्य उद्योग धंधों का संचालन बड़े कल-कारखानों के द्वारा एवं शेष वस्तुओं का उत्पादन छोटे एवं कुटीर उद्योगों के माध्यम से करने पर गांधी जी ने बल दिया था। सामाजिक क्षेत्र में जन्म के आधार पर जाति के निर्धारण का उन्होंने विरोध किया था। वे कर्म के अनुसार लोगों को समाज में सम्मान देना चाहते थे। गांधी जी सादा जीवन एवं उच्च विचार के पक्षपाती थे। इस तरह से गांधी दर्शन देश और समाज को नई रोशनी प्रदान करता है। ❑

बाबरी विध्वंस मामला

मकतूल खुद गिरा था खंजर की नोंक पर

❑ रामदत्त त्रिपाठी

छह दिसम्बर 1992 को अयोध्या में बाबरी मस्जिद विध्वंस कुछ अराजक तत्वों के अचानक हमले का नतीजा था या सुनियोजित और संगठित प्रयास का परिणाम? इतिहास में यह सवाल हमेशा पूछा जाएगा. वेदों में कहा गया है कि सत्य का मुख सोने के पात्र से ढका हुआ होता है. सत्य की खोज श्रमसाध्य और अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है. सत्य अलग-अलग कोण से अलग-अलग दिखता है और देखने वाले की नज़र से भी.

मैं, बाबरी मस्जिद बनाम राम जन्मभूमि प्रकरण में एक दर्शक रहा हूँ. चालीस साल तो प्रत्यक्ष और उसके पहले की घटनाओं को फ़ाइलों और किताबों के ज़रिए जाना-समझा है. वास्तव में यह कहानी दिसम्बर 1949 से शुरू होती है, जब रात में पुलिस के पहरे के बीच मस्जिद में भगवान राम की मूर्तियाँ प्रकट हुईं या जैसा कि पुलिस रिपोर्ट में है कि 'चोरी से रखकर मस्जिद को अपवित्र कर दिया गया.'

सीबीआई के मुताबिक़ यह षड्यंत्र था, लेकिन सीबीआई उतना पीछे नहीं गई, सीबीआई की कहानी पिछले शिलान्यास के आसपास शुरू होती है. चार्जशीट में उल्लेख किया गया कि हाईकोर्ट ने 14 अगस्त 1989 और फिर सात नवम्बर 1989 को विवादित राम जन्मभूमि परिसर में यथास्थिति बनाए रखने का आदेश दिया था, जो छह दिसम्बर 1992 तक जारी था.

इसके बाद भारतीय जनता पार्टी के तत्कालीन अध्यक्ष लाल कृष्ण आडवाणी ने विवादित स्थल पर राम मंदिर निर्माण की माँग को लेकर सोमनाथ से अयोध्या तक की रथयात्रा शुरू की. एक अक्तूबर 1990 को शिव सेना अध्यक्ष बाल ठाकरे ने मुंबई में आडवाणी का स्वागत किया और उन्होंने वहाँ की जनसभा में यह संकल्प दोहराया.

इसके बाद जून 1991 में भारतीय जनता पार्टी उत्तर प्रदेश की सत्ता में आ गई. मुख्यमंत्री कल्याण सिंह ने मुरली मनोहर जोशी और पूरे मंत्रिमंडल के साथ अयोध्या में राम जन्मभूमि का दर्शन कर वहीं मंदिर निर्माण का संकल्प लिया. 17 जुलाई 1991 को शिवसेना सांसद मोरेश्वर सावे ने कल्याण सिंह को पत्र लिखकर राम मंदिर निर्माण तत्काल शुरू करने की बात कही. जवाब में कल्याण सिंह ने 31 जुलाई को पत्र लिखकर कहा कि ज़रूरी कार्यवाही हो रही है.

इसके बाद कल्याण सरकार ने वहाँ मस्जिद के सामने की ज़मीन और कई मंदिरों का अधिग्रहण करके हाइवे से चौड़ी सड़क बनवायी. साथ ही कांग्रेस सरकार ने बगल में राम कथा पार्क के लिए अधिग्रहीत 42 एकड़ ज़मीन विश्वहिंदू परिषद को दे दी.

देश भर से आए कारसेवकों को छह दिसम्बर को तम्बू कनात लगाकर यहीं टिकाया गया. यहीं पर लाठी डंडों से लैस कारसेवकों ने पाँच दिसम्बर को रस्सियां, कुदाल और फावड़े लेकर टीले पर मस्जिद गिराने का रिहर्सल किया. इस तरह सीबीआई के मुताबिक़ बाबरी मस्जिद को गिराने का यह लम्बे समय से चला आ रहा सुनियोजित षड्यंत्र था, जिसमें संघ परिवार के विभिन्न संगठनों के अलावा शिव सेना के बड़े नेता शामिल थे. सीबीआई ने अपनी चार्जशीट पांच अक्तूबर 1993 को पेश कर दी.

स्पेशल सेशंस कोर्ट ने क्या नोट किया?

अयोध्या प्रकरण के लिए गठित स्पेशल सेशंस कोर्ट के जज जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव ने नौ सितम्बर 1997 को अभियुक्तों के खिलाफ़ चार्ज फ्रेम किए. जज ने अपने आदेश में रिकार्ड किया, 'पाँच दिसम्बर को विनय कटियार के निवास पर गुप्त बैठक हुई, जिसमें आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी, विनय कटियार और पवन पांडेय ने हिस्सा लिया और उसमें विवादित ढाँचे को गिराने का निर्णय लिया गया.'

इसी आदेश के अनुसार, 'केंद्रीय पैरामिलिट्री फ़ोर्स की 195 कम्पनियां फ़ैज़ाबाद में केंद्रीय सरकार की तरफ़ से राज्य सरकार की मदद और क़ानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए भेजी गयीं, लेकिन उनका भारतीय जनता पार्टी सरकार ने इस्तेमाल नहीं किया. जबकि पांच दिसंबर 1992 को राज्य के गृह सचिव ने केंद्रीय बल के प्रयोग के लिए सुझाव दिया था, लेकिन कल्याण सिंह इससे सहमत नहीं हुए.'

अभियुक्तों ने आरोप तय करने के फ़ैसले के खिलाफ़ हाईकोर्ट में क्रिमिनल रिवीज़न याचिका दाखिल की. यह उल्लेख करना ज़रूरी है कि छह दिसम्बर को बाबरी मस्जिद ढहने के बाद अयोध्या में पुलिस ने दो मुक़दमे दर्ज किए थे. एक, लाखों अज्ञात कारसेवकों के खिलाफ़ मस्जिद तोड़ने के षड्यंत्र, बलवा, लूटपाट जैसे कई अपराधों के लिए और दूसरा धार्मिक उन्माद तथा कारसेवकों को भड़काने वाले भाषण देने के लिए. इसके अलावा 47 और मुक़दमे पत्रकारों पर हमले से संबंधित दर्ज हुए. सीबीआई ने इन सबकी एक संयुक्त चार्जशीट दाखिल की थी.

सीबीआई के मुताबिक़ एक अक्तूबर 1990 को रथयात्रा के बाद सारी सभाएँ, भाषण और छह दिसम्बर को हुई समस्त घटनाएँ आपस में जुड़ी हुई हैं और एक ही षड्यंत्र का हिस्सा हैं. स्पेशल कोर्ट ने इसी संयुक्त चार्जशीट के आधार पर आरोप निर्धारित किए थे. भड़काऊ भाषण वाले मामले में आडवाणी समेत आठों अभियुक्त पहले ही गिरफ्तार हो गए थे. इन लोगों को ललितपुर के माताटीला बांध गेस्ट हाउस में रखा गया था. ललितपुर में स्पेशल कोर्ट बनाकर मुक़दमा शुरू हुआ था. बाद में यह केस रायबरेली ट्रांसफ़र हो गया. सीबीआई ने कोर्ट से अनुमति लेकर इस केस को भी अन्य मामलों के साथ जोड़ लिया था.

राज्य सरकार ने केस लखनऊ स्पेशल कोर्ट को भेजा

राज्य सरकार ने हाई कोर्ट से परामर्श किए

बिना लखनऊ की स्पेशल कोर्ट की अधिसूचना संशोधित कर इस मामले को भी अयोध्या प्रकरण वाली लखनऊ की स्पेशल कोर्ट को दे दिया था. सभी बड़े नेता इस केस में अलग से नामज़द थे और क्रिमिनल रिवीज़न का यही मुख्य बिंदु था कि यह संशोधन ग़ैर-क़ानूनी था.

जस्टिस जगदीश चंद्र भल्ला ने क़रीब चार साल बाद 12 फ़रवरी 2001 को अपने फ़ैसले में कहा कि निचली अदालत ने संयुक्त चार्जशीट के आधार पर आरोप तय करने में कोई ग़ैर-क़ानूनी काम नहीं किया, क्योंकि 'सभी आपराधिक घटनाएँ एक ही षड्यंत्र को पूरा करने के लिए की गई थीं.' हाईकोर्ट ने यह भी कहा कि पहली नज़र में एक षड्यंत्र और एक समान उद्देश्य के लिए ग़ैर-क़ानूनी जमावड़े का मामला बनता है. चूँकि यह सब कथित अपराध एक ही कृत्य के सिलसिले में घटित थे, इसलिए स्पेशल कोर्ट ने इनका संज्ञान लेकर सही किया.

लेकिन जस्टिस भल्ला ने कहा कि राज्य सरकार ने हाईकोर्ट से परामर्श किए बिना क्राइम नम्बर 198 यानी भड़काऊ भाषण वाले मामले को भी लखनऊ की स्पेशल कोर्ट को भेजने की जो अधिसूचना जारी की है, वह त्रुटिपूर्ण है. कोर्ट ने कहा कि यह त्रुटि दूर करने लायक़ है और राज्य सरकार चाहे तो ऐसा कर सकती है.

सीबीआई ने भारतीय जनता पार्टी की राजनाथ सिंह सरकार से त्रुटि दूर करने को लिखा, लेकिन वहाँ से यह बात नामंज़ूर हो गई. राजनाथ सिंह के बाद मुलायम सिंह और मायावती सरकारों ने भी त्रुटि दूर करने से मना कर दिया. मोहम्मद असलम भूरे हाईकोर्ट के आदेश के खिलाफ़ सुप्रीम कोर्ट गए पर उनकी याचिका रद्द हो गई. लखनऊ स्पेशल कोर्ट के जज ने एक कदम आगे जाकर 4 मई 2001 को भड़काऊ भाषण देने वाले केस के आठ बड़े अभियुक्तों के साथ-साथ कल्याण सिंह समेत तेरह अन्य प्रभावशाली अभियुक्तों के खिलाफ़ मामला ख़त्म कर दिया.

आडवाणी पर चल रहा आपराधिक षड्यंत्र का मामला हटा

इसके बाद ही इस केस का ट्रायल लखनऊ और रायबरेली दो जगह चलने लगा. आडवाणी वग़ैरह आठ बड़े लोगों के खिलाफ़ मामला रायबरेली में चल रहा था, लेकिन कल्याण सिंह समेत 13 लोगों के खिलाफ़ कहीं नहीं. रायबरेली कोर्ट ने अकेले आडवाणी को बरी या डिस्चार्ज भी कर दिया. जोशी और अन्य बाक़ी लोगों की अपील पर हाईकोर्ट ने आडवाणी समेत आठों लोगों पर मुक़दमा चलाने को कहा. इस तरह आडवाणी आदि पर मस्जिद तोड़ने के आपराधिक षड्यंत्र का मामला ड्रॉप हो गया और केवल भड़काऊ भाषण का मामला बचा.

जस्टिस भल्ला के आदेश के खिलाफ़ सुप्रीम कोर्ट में अपील 29 नवंबर 2002 और 12 फरवरी 2008 को ख़ारिज हो गई. उधर सीबीआई के लखनऊ स्पेशल कोर्ट के जज ने 4 मई 2001 को 21 अभियुक्तों के खिलाफ़ मामला ड्रॉप करने के खिलाफ़ हाईकोर्ट में रिवीज़न दाखिल किया.

दस साल बाद 22 मई 2001 को हाईकोर्ट ने इसे ख़ारिज कर दिया. इस आदेश के खिलाफ़ सीबीआई सुप्रीम कोर्ट गई. सात साल बाद 19 अप्रैल 2017 को जस्टिस पिनाकी चंद्र घोष और जस्टिस आरएफ नरीमन की बेंच ने अपने जजमेंट में उल्लेख किया कि जस्टिस भल्ला ने संयुक्त चार्जशीट और ट्रायल को वैध ठहराया था, जिसमें मस्जिद गिराने का षड्यंत्र शामिल था.

कोर्ट ने आगे आदेश दिया कि रायबरेली में चल रहा मुक़दमा लखनऊ की स्पेशल कोर्ट में ट्रांसफ़र हो जाएगा. लखनऊ की स्पेशल सेशंस कोर्ट आडवाणी वग़ैरह के खिलाफ़ आईपीसी की धारा 120 (बी) के तहत अतिरिक्त चार्ज फ्रेम करेगी. इस तरह क़रीब 23 साल बाद लखनऊ में फिर से संयुक्त ट्रायल शुरू हुआ. यह सारी देरी इसलिए हुई कि हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट ने रिवीज़न और अपील पर फ़ैसला देने में सालों लगा दिए.

1994 में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी

इससे पहले एम इस्माइल फ़ारूक़ी ने अयोध्या में नरसिम्हा राव सरकार के भूमि अधिग्रहण को चुनौती दी थी. चीफ़ जस्टिस जेएस वर्मा की बेंच ने भूमि अधिग्रहण क़ानून को वैध ठहराते हुए बाबरी मस्जिद विध्वंस को 'राष्ट्रीय शर्म' करार दिया था. कोर्ट ने कहा था, 'दोपहर के आसपास बीजेपी, वीएचपी आदि के नेता राम जन्मभूमि बाबरी मस्जिद इमारत के ऊपर चढ़ गए और गुम्बदों को क्षतिग्रस्त करना शुरू कर दिया. वास्तव में यह राष्ट्रीय शर्म का कृत्य था, जिसका विध्वंस हुआ वह केवल एक पुरानी इमारत नहीं थी, बल्कि अल्पसंख्यकों का बहुसंख्यकों की न्याय और निष्पक्षता पर भरोसा था.'

2019 में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी

पिछले साल अयोध्या भूमि विवाद में विवादित ज़मीन हिन्दुओं के पक्ष में देते हुए भी सुप्रीम कोर्ट ने मस्जिद तोड़ने पर कड़ी टिप्पणी की थी. कोर्ट ने कहा था कि मुस्लिम समुदाय का प्रार्थना स्थल ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से तोड़ा गया था. कोर्ट ने कहा था कि मुस्लिम समुदाय को मस्जिद की इमारत से जिस तरह वंचित किया गया था, वैसा तरीक़ा विधि के शासन से प्रतिबद्ध एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र में नहीं अपनाया जाना चाहिए था. कोर्ट ने याद दिलाया था कि संविधान में सभी धर्मों को समान मानने की व्यवस्था है. सहिष्णुता और सह-अस्तित्व से हमारे राष्ट्र और इसके लोगों का पोषण होता है.

लिब्रहान जाँच आयोग को षड्यंत्र के सबूत मिले

केंद्र सरकार ने बाबरी मस्जिद विध्वंस के लिए जस्टिस एमएस लिब्रहान की अध्यक्षता में एक न्यायिक जाँच आयोग बनाया था. इस आयोग ने 30 जून 2009 को अपनी रिपोर्ट में कहा था कि 'बाबरी मस्जिद विध्वंस एक सुनियोजित घटना थी.'

आयोग ने भारतीय जनता पार्टी की त्रिमूर्ति - अटल बिहारी वाजपेयी, लाल कृष्ण आडवाणी और मुरली मनोहर जोशी समेत 68 लोगों को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया था. इनमें आरएसएस, वीएचपी और बजरंग दल के नेता भी शामिल थे.

सैकड़ों घंटों के ऑडियो-वीडियो टेप सुनने और गवाहों के बयान के बाद जस्टिस लिब्रहान की टिप्पणी थी, 'हम एक क्षण के लिए भी यह नहीं सोच सकते कि आडवाणी, वाजपेयी और जोशी को संघ परिवार के इरादों की जानकारी नहीं थी.' लेकिन आयोग ने सबसे

ज्यादा दोषी तत्कालीन मुख्यमंत्री कल्याण सिंह को बताया था.

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि इस आंदोलन को चलाने के लिए संघ परिवार को अज्ञात स्रोतों से धन मिला और इन संगठनों के खातों से भी दसियों करोड़ रुपए निकालकर छह दिसम्बर की घटना को अंजाम देने के लिए खर्च किए गए. इतने बड़े पैमाने पर धन खर्च करना इस बात का संकेत है कि आंदोलन के लिए जनमत बनाने और लोगों को संगठित करने से लेकर विध्वंस तक सब कुछ नियोजित था.

आयोग ने कहा था कि आरएसएस संगठन में सेना जैसा अनुशासन है और जिस तरह की व्यवस्था की गई थी, उससे नहीं लगता कि यह सब केवल सांकेतिक कारसेवा के लिए था. आयोग ने कहा कि इन संगठनों के नेताओं का यह कहना सही नहीं है कि कुछ उत्तेजित कारसेवकों ने यह सब अचानक किया. जिस तरह कुछ थोड़े से लोगों ने अपनी पहचान छिपाकर इतनी कम जगह में इमारत पर धावा बोला, मूर्तियों और दान पात्र को हटाया और अस्थायी मंदिर बनाकर उन्हें फिर से स्थापित किया, उनके पास इमारत तोड़ने और अस्थायी मंदिर बनाने के औज़ार तथा संसाधन उपलब्ध थे, उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इसके लिए बड़ी मेहनत से तैयारी की गई और योजना बनायी गई थी.

आयोग का निष्कर्ष है कि जिस काम में इतनी बड़ी संख्या में कारसेवकों की हर जगह ड्यूटी लगायी गयी, जिनके पास सूचनाओं के अनेक स्रोत थे, यह हो नहीं सकता कि उन मुख्यमंत्री कल्याण सिंह को इसके बारे में न पता हो. ऐसा नहीं हो सकता कि तत्कालीन संघ प्रमुख केएस सुदर्शन को न पता हो या विनय कटियार और अशोक सिंघल जैसे नेताओं को न पता हो. आयोग ने कहा कि 'आरएसएस और वीएचपी का यह एक सूत्री एजेंडा था. कुछ मुट्ठी भर विचारकों और धार्मिक उपदेशकों ने आम जनता के दिलो-दिमाग़ को एक ऐसी उपद्रवी भीड़ में बदल दिया, जिसने हाल के समय में सबसे दुष्टता पूर्ण कार्य को अंजाम दिया.' 'कुछ मुट्ठी भर बुरी नीयत वाले नेताओं ने बेशर्मी के साथ मर्यादा पुरुषोत्तम के नाम का इस्तेमाल कर के शांतिपूर्ण समुदायों को असहिष्णु झुंड में बदल दिया'.

अत्यंत कठोर शब्दों का इस्तेमाल करते हुए जस्टिस लिब्रहान ने लिखा कि 'इस बात के पक्के सबूत मिले कि सत्ता और दौलत की लालच से बीजेपी, आरएसएस, वीएचपी, शिव सेना, बजरंगदल आदि में ऐसे नेता पैदा हुए, जिन पर न उनकी विचारधारा और न नैतिक मूल्यों का दबाव था'. 'इन नेताओं ने अयोध्या मुद्दे को अपनी सफलता के हाइवे के रूप में देखा और वह इस मार्ग पर तीव्र गति से दौड़ पड़े, बिना यह परवाह किए कि इससे रास्ते में चारों तरफ़ कितने लोग मारे जाएँगे.'

यह सब पढ़ने के बाद मन में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि जब लिब्रहान जाँच आयोग के पास सुनियोजित षड्यंत्र के प्रमाण आ गए थे और वही प्रमाण और गवाह लखनऊ की स्पेशल कोर्ट के सामने भी थे तो दोनों के निष्कर्ष इतने अलग क्यों? स्पेशल कोर्ट को मस्जिद विध्वंस का न कोई षड्यंत्र दिखा, न पूर्व योजना दिखी और न ही 'बाबरी मस्जिद का कलंक' मिटाने का आंदोलन चलाने वाले किसी नेता का हाथ दिखा. उल्टे कोर्ट की निगाह में वे मस्जिद को बचाने की कोशिश कर रहे थे.

दरअसल, हर छोटी-बड़ी अदालत अपने निर्णय के लिए स्वतंत्र रूप से काम करती है. किसी जाँच आयोग के निष्कर्ष उस पर बाध्यकारी नहीं हैं, भले ही जाँच सुप्रीम कोर्ट के पूर्व जज ने की हो.

जब कोई जज क्रिमिनल ट्रायल में बैठता है तो चार्ज फ्रेम करने में उसे पहली नज़र में मामला बनता है या नहीं, यह देखना होता है. दोष सिद्ध करने के लिए उसे सबूतों को इस कसौटी पर तौलना होता है कि किसी मुलजिम का जुर्म असंदिग्ध रूप से प्रमाणित होता है या नहीं. शक का लाभ हमेशा मुलजिम को मिलता है.

व्यंग्यात्मक लहजे में कुछ लोग यह भी कहने लगे हैं कि शायद मस्जिद अपना जीवनकाल समाप्त मानकर स्वयं ध्वस्त हो गयी और कुछ निर्दोष कारसेवक उसके नीचे दब गए. ऐसे में बाबरी मस्जिद को एक लीगल पर्सन मानकर उसके खिलाफ़ हत्या का मुक़दमा भी चलाया जा सकता है. ❑

श्रद्धांजलि

निर्भयता के प्रतीक विजय बाबू का निधन

वरिष्ठ सर्वोदयी और सार्वजनिक जीवन में शुचिता के प्रतीक छपरा निवासी विजय कुमार भाई का 12 अक्टूबर 2020 को निधन हो गया। वे लगभग 72 वर्ष के थे। सर्वोदय और लोक समिति की यात्रा में जितनी दृढ़ता और निष्ठा हो सकती है, उसका उन्होंने उतना पालन किया। उस समय वे गांधी सेवा आश्रम जलालपुर-सारण और बाद में जयजगत आश्रम कोपा सारण को संभालते थे और हाथ की चक्की का आटा और चीनी के बदले गुड़ का इस्तेमाल भोजन में करते थे। उन्होंने सपने में भी शुचिता और निर्भयता का कभी परित्याग नहीं किया।

उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश, विनोबा, गांधीजी के विचारों को गांव-गांव तक पहुंचाया और सामान्य सार्वजनिक कार्यकर्ता की तरह अपने लिए कोई व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा नहीं पाली।

उनके जाने के बाद जब हम बिहार के सार्वजनिक और विशेषकर गांधी, सर्वोदय की संस्थाओं को दुर्दशाग्रस्त देखते हैं, तो उसमें अकेले विजय बाबू शुभ्र अपवाद की तरह दिखते हैं। इसका प्रमाण यही है कि उन्होंने सर्वोदय और लोकसमिति के शीर्ष पर रहते हुए भी अपने लिए कभी कोई राजनीतिक आकांक्षा नहीं रखी। विजय बाबू को सही मायने में याद करने का एक ही तरीका होगा कि हम सभी जात-पात, दल और संप्रदाय को भुला दें।

लोक समिति, सर्वोदय, गांधी सेवा आश्रम जैसी पवित्र धरोहरों को बनाने में उन्होंने अपना सर्वस्व लगाया। जब तक ये संस्थाएं अपने रूप में कायम रहेंगी, विजय बाबू मरकर भी अमर रहेंगे।

भारतीय राजनीति पर राष्ट्रनीति के यक्ष प्रश्न

❑ ओमप्रकाश गिरि

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारतीय राजनीति पर समय-समय पर अनेक बार सार्थक प्रश्न उठाये गये हैं। उसमें न्यायपालिका, मीडिया, बौद्धिक वर्ग आदि ने कई बार आलोचना/समालोचना की है। कानूनों का भी परीक्षण हुआ है, परन्तु भारतीय राजनीति पर, भारत की राष्ट्रनीति की दृष्टि से परीक्षण व प्रश्न तुलनात्मक रूप से कम उठाये गये हैं। राष्ट्र की संकल्पना, देश/राज्य की संकल्पना से बहुत प्राचीन है। राष्ट्र व देश एक संकल्पना नहीं हैं। देश बनने के लिए भूमि का टुकड़ा तथा जनसंख्या आवश्यक है, किन्तु राष्ट्र बनने के लिए ये तीन घटक आवश्यक है।

पहला जिस देश में लोग रहते हैं, उस भूमि के बारे में 'मातृ' भाव का होना। दूसरा उसकी संस्कृति या मूल्य अवधारणा तथा तीसरा अपने पुरखों व अपने इतिहास के विषय में प्रबल भावना। देश दिखाई पड़ता है, राष्ट्र अदृश्यमान है। जैसे शरीर दिखाई पड़ता है और आत्मा अदृश्य है। जैसे अस्मिता व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण होती है,वैसे ही राष्ट्र की अस्मिता भी राष्ट्र के लिए महत्वपूर्ण होती है। राष्ट्रीय अस्मिता के कमजोर होने पर राष्ट्र कमजोर हो जाता है। राष्ट्र की अस्मिता ही, राष्ट्र का प्राणतत्व है। राष्ट्र की भूमि और जन का सम्बन्ध माता व पुत्र का संबंध होता है। हमारी राष्ट्रीयता का आधार 'भारत माता' की भावना है।

राष्ट्र व राज्य एक नहीं होते

राष्ट्र भूसांस्कृतिक श्रद्धा से निर्मित होते हैं। राज्य, किसी भूभाग पर सत्ता या शासन की व्यवस्था होते हैं। एक राष्ट्र में कई देश हो सकते हैं। भारत एक भौगोलिक शब्द नहीं, वरन् एक सांस्कृतिक शब्द है। यह एक संस्कृति का, समृद्ध परम्परा का नाम है। राष्ट्र का विचार, टुकड़ों-टुकड़ों में नहीं है। पिछले अनेक दशकों से भारत में राष्ट्रनीति नही, वरन् राजनीति, वह भी स्वार्थ, लाभ की दृष्टि से ही ज्यादातर दिखलायी पड़ती है।

भारतीय राजनीति में 1947 से लेकर अनेक वर्षों तक एक ही राजनैतिक दल सत्ता में रहा। शासन प्रशासन पर पश्चिमी देशों की सोच का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अधिकांश राजनैतिक दलों व नेताओं ने राजनीति का उद्देश्य, केवल व केवल सत्ता प्राप्ति व उससे लाभ आदि का अर्जन किया जाना समझा है। राजनीति अलग होती है, तथा राष्ट्रनीति के मुख्य तत्व अलग होते है। राष्ट्रनीति को लोकनीति के रूप में समझा जा सकता है, राज्य वृत्त एक अलग विषय है और लोकवृत्त अलग। राष्ट्रनीति का लक्ष्य, राष्ट्र निर्माण होता है, सत्ता प्राप्ति मात्र नहीं। राष्ट्र-निर्माण का परम लक्ष्य, राष्ट्र को परम वैभव तक ले जाना है। सारी दुनिया का इतिहास यह स्पष्ट करता है कि राष्ट का निर्माण कभी भी शासन/सत्ता के द्वारा हुआ हो, ऐसा नहीं है। जब जन सामान्य, जागृत होकर, संगठित रूप से चरित्र निर्माण के द्वारा राष्ट्र निर्माण का सर्वांगीण प्रयास करेगा, तभी जनकल्याण, राष्ट्र निर्माण व परम वैभव का लक्ष्य प्राप्त हो सकता है।

बदले सिद्धांत और आदर्श

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व राजनीति में कूदने का मतलब त्याग और परम वैभव की प्राप्ति हेतु स्वतंत्रता आन्दोलन में हिस्सेदारी होती थी। उस समय राजनीति में लोग, समाज व राष्ट्र को कुछ अर्पण करने जाते थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कुछ वर्षों तक उसकी छाया/प्रतिछाया दिखी। परन्तु पिछले खासकर चार दशकों से जो राजनीति में आये, उनमें अधिकांशतः कुछ पाने की लालसा से ही राजनीति में आये। समाज व राष्ट्र को कुछ देने का कहीं कोई मंतव्य, अधिकतर लोगो में नहीं दिखता है।

हमारी चिंतनधारा

हमारी संस्कृति में हमारी चिन्तनधारा को कठोपनिषद में नचिकेता के यम से कथन में स्पष्ट किया गया है –

'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो लप्स्यामहे
वित मुद्राक्ष्म चेत्वा।
जीवेष्यामों यावदी शिस्यसि त्व वरस्तु में
वरणीयः से स्व॥'

(कठोपनिषदः श्लोक 27)

अर्थात धन से मनुष्य कभी तृप्त नहीं हो सकता, आग में घी डालने से जैसे आग जोरों से भड़कती है, उसी प्रकार धन और भोगों की प्राप्ति से भोग कामना का और भी विस्तार होता है, वहाँ तृप्ति कैसी?

वहाँ तो दिन रात अपूर्णता और अभाव में ही जलना पड़ता है। ऐसे दुःख में धन और भोगों की माँग कोई भी बुद्धिमान पुरुष नहीं कर सकता। भारत राष्ट्र में 'तेन व्यक्तेन भुंजीथा' और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की वैचारिक भूमि रही है।

आज की राजनीति

किन्तु स्वतंत्र भारत में आज की राजनीति में, परिवार व भाई/भतीजे के अलावा बहुतेरे नेताओं को कुछ दिखता ही नहीं। कहाँ तो महात्मा गाँधी और डॉ. भीमराव अम्बेडकर जैसे विद्वानों, समाजसेवियों व विचारकों की सरणि थी। सुभाष चन्द्र बोस ने आईसीएस की नौकरी को लात मार दिया था। अब वैसे नेता कहाँ हैं? अब तो परिवारवादी राजनेताओं का एक सूत्री कार्यक्रम सत्ता की प्राप्ति है।

क्षेत्रवाद की समस्या

दूसरी बड़ी समस्या आज की राजनीति में बढ़ते क्षेत्रवाद की है। क्षेत्रवाद की भावना के उभार में, भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन बहुत हद तक जिम्मेदार है। भाषा को संप्रेषण के माध्यम के रूप में न देखकर राजनैतिक महात्वाकांक्षाओं की प्राप्ति के लिए इस्तेमाल किया गया। आज कुछ पिछले पाँच/छह दशकों से भाषा को एक राजनैतिक हथियार के रूप में विभिन्न राजनैतिक दल इस्तेमाल कर रहे हैं। आजादी मिलने के तुरन्त बाद अगर राष्ट्रभाषा हिन्दी को एक मात्र सरकारी कामकाज की भाषा बनाया गया होता तो भाषा के आधार पर क्षेत्रवाद को पनपने का

अवसर न मिलता। क्षेत्रवाद की भावना को हवा देने से क्षेत्रीय दलों का उभार हुआ। अनेक बार कई क्षेत्रीय दल, अपने संकुचित राजनैतिक हितों के कारण, राष्ट्र की एकता पर कुठाराघात करते हैं। सत्ता के लोभ में भाषा के आधार पर आन्दोलन (कई बार हिंसक प्रदर्शन आदि) कराने का इतिहास हमारे सामने हैं।

हिन्दी विरोध के नाम पर राजनीति, क्षुद्र राजनैतिक हितों की पूर्ति करती रही है। देश के अन्य भागों में भाषा व क्षेत्र के नाम पर जो राजनैतिक षडयंत्र हुए हैं, उनकी नींव राज्य पुनर्गठन आयोग ने ही डाली थी, इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता। यदि दृढ़ निश्चय से, भाषायी आधार पर राज्यों का पुनर्गठन रोका जाता तो बहुत सारी समस्याओं से बचा जा सकता था।

राजनीति में माफिया का प्रवेश

राजनीति में माफिया का प्रवेश बढ़ना एक खतरनाक संदेश है। कुछ राज्यों विशेषतः उत्तर प्रदेश, बिहार आदि में माफिया का प्रवेश शुरुआत में सहायक के रूप में ही था। बूथ मैनेजमेन्ट, विपक्षी प्रत्याशी को डराने/धमकाने का कार्य माफिया द्वारा किया जाता था। धीरे-धीरे माफिया को लगा कि जब वे ही महत्वपूर्ण हैं तो क्यों न प्रत्यक्षतः चुनाव लड़ें। आरम्भ में कई माफिया स्वतंत्र या छोटे दलों के उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़े। बाद में क्षेत्रीय दलों ने उन्हें उम्मीदवार बनाना शुरू किया।

फिर क्या था, बाहुबल के आधार पर वे डरा/धमकाकर तथा जाति/धर्म का सहारा लेकर चुनाव लड़ने और जीतने भी लगे। कुछ दलों को छोड़कर लगभग सभी क्षेत्रीय दलों में माफिया का महत्व बढ़ा। यह प्रवृत्ति उत्तर भारत में कुछ ज्यादा है। धीरे-धीरे वे एक ही सीट से बार-बार चुनाव लड़े और जीते भी। कुछ माफिया तो सत्ता के बदलने पर पार्टी बदलते रहे। राजनीति में माफिया के उदय तथा महत्वपूर्ण बनने में राजनीति के बड़े खिलाड़ियों और सरकारों की भी बड़ी भूमिका रही है। कई बार पुलिस-प्रशासन से भी जाति/धर्म के आधार पर माफिया को अधिकारियों और बड़े नेताओं का समर्थन मिला है। माफिया लोग, पुलिस प्रशासन एवं सरकारों के प्रभाव से ठीकों आदि पर कुंडली मार कर बैठ गये।

धीरे-धीरे, अपराधी-राजनेता-पुलिस गठजोड़ के कई मामलों से माफिया, विशाल आर्थिक साम्राज्य खड़ा करने में सफल हो गये। जिस माफिया से आम जनता को डर लगता है, वे निजी सुरक्षा गार्ड रखते हैं। कई मामलों में उनकी जान के नकली खतरों के आधार पर उन्हें सरकारी सुरक्षा भी मिल जाती है। सड़क पर काले शीशे चढ़ाये बड़ी-बड़ी कारों/गाड़ियों के काफिले में खुलेआम असलहे लहराते हुए, सड़कों पर निकलना इनका फैशन बन गया। ये माफिया समाज सेवा से जुड़े होने का नकली प्रचार भी कराते हैं। अखबारों व अन्य माध्यमों से यह होता रहा है।

धनबल का महत्व

बाहुबल के अतिरिक्त धनबल का महत्व भी धीरे-धीरे राजनीति में बढ़ता गया। अनुमानतः वर्ष 1980 के बाद से यह बहुत तेजी से बढ़ा है। पहले जहाँ विधानसभा के चुनाव 1980 के आसपास तक हजारों के खर्च में लड़े जाते थे, धीरे-धीरे यह राशि लाखों रुपये में हुई और फिर विधानसभा/लोकसभा के चुनावों में करोड़ों रूपये खर्च होने लगे।

बौद्धिक लोगों का हाशिये पर जाना

क्षेत्रवाद, परिवारवाद, जातिवाद, माफिया, धनबल के अतिरिक्त, एक प्रमुख तत्व बौद्धिक लोगों का राजनीति से हाशिए पर जाना रहा है। पहले राजनीति में जो भी लोग आते थे, बौद्धिक वर्ग से आते थे। बालगंगाधर तिलक, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, महात्मा गाँधी, जवाहर लाल नेहरू, राममनोहर लोहिया आदि नेता अच्छे लेखक भी थे। राजनैतिक सत्ता आती है और जाती है, महत्व तपश्चर्या, राष्ट्रचिन्तन और नैतिक नेतृत्व का है। दुर्भाग्य है कि पिछले लगभग तीन दशकों में एक प्रवृत्ति राजनैतिक क्षेत्र में बढ़ रही है कि बौद्धिक वर्ग को महत्व कम मिलना शुरू हुआ है। हाथी, बहुत बड़ा और शक्तिशाली होता है परन्तु बहुत छोटा सा अंकुश उस पर नियन्त्रण करता है।

राजसत्ता में बड़ी शक्ति होती है, किन्तु चन्द्रगुप्त मौर्य को आचार्य चाणक्य की आवश्यकता थी। हमारे यहाँ राजा को कभी भी सर्वोच्च सत्ता या शक्तिमान नहीं माना गया। कानून बनाने का अधिकार, राजा को या शासन को नहीं था। हमारे यहाँ राजा को संविधान का पालक ही माना गया। भारत में स्मृतियाँ, लंगोटी वालों ने बनायी थीं। हमारे यहाँ गुरूकुल प्रणाली की शिक्षा थी, जो राष्ट्र को समर्पित शक्ति तैयार करती थी।

मुनि वशिष्ठ महल में नहीं रहते थे।

चाणक्य तो अपनी कुटी में ही रहे, जबकि उन्होंने ही चन्द्रगुप्त मौर्य को राजा बनाया। राष्ट्र की सुरक्षा के सम्बन्ध में सभी राजनैतिक दलों को राष्ट्रहित की दृष्टि से राष्ट्र का चिन्तन करना चाहिए। इधर ऐसा देखा गया है कि क्षुद्र राजनीतिक स्वार्थ साधना के लिए राष्ट्रहित का विचार कई राजनैतिक दल नहीं करते। राजनीति में संवाद व संप्रेषण का स्तर दिनों दिन गिरता जा रहा है। अपनी राय को रखने के लिए कितने खराब शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, यह देखकर चिन्ता होती है। राजनैतिक विरोध उचित हैं, किन्तु भाषा की मार्यादा भी अत्यन्त आवश्यक है। पहले लोग समस्या पर विचार विमर्श करके ज्यादातर पत्र से विचार व्यक्त करते थे। अब 'तत्काल सेवा' की भाँति ट्विटर जैसे साधनों का उपयोग, बिना विषय वस्तु को समझे ही, करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। समाज के सभी अंगों की भाषा आदि बदली है, परन्तु अभिव्यक्ति का तरीका राजनीति में सबसे ज्यादा खराब हुआ है। भारतीय विचार सरणि में राजनीति, राष्ट्रनीति का एक अंग रही है।

जब राजनीति, राष्ट्रनीति से अलग होने की कोशिश करती है तो जनमन में पीड़ा होती है। भारतीय विचार पद्धति, खण्ड-खण्ड में नहीं विचार करती। हमारी दृष्टि एकात्म रही है। हमारे यहाँ, राष्ट्र के परम वैभव की प्राप्ति हेतु, राष्ट्रनीति का मूलतत्व, राष्ट्र चिन्तन, नैतिक सत्ता व 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा है। सारी दुनिया हमारा परिवार है और राष्ट्रहित हमारा परमहित है। जब यह सोच राजनैतिक दलों में बढ़ेगी, तभी राष्ट्र परम वैभव प्राप्त कर सकेगा।

- मीडिया स्वराज

लोकतंत्र की अंतिम क्रिया अभी बाकी है!

❑ अरुंधति रॉय

जब दीवाली करीब आ रही है और हिंदू लोग अपने राज्य में (और उस नए भव्य मंदिर में, जो अयोध्या में उनके लिए बनाया जा रहा है) भगवान राम की सफल वापसी का उत्सव मनाने की तैयारियां कर रहे हैं, हम बाक़ी लोगों को बस भारतीय लोकतंत्र की सिलसिलेवार सफलताओं के जश्न से ही तसल्ली करनी पड़ेगी. हाथरस से बेचैन कर देने वाले एक दाह संस्कार की, एक महान साजिश को दफनाने और एक दूसरी साजिश की कहानी बनाने की जो खबरें आ रही हैं, उसमें हम खुद पर, अपनी संस्कृति पर, अपनी सभ्यता के मूल्यों पर नाज़ किए बिना कैसे रह सकते हैं, जो प्राचीन भी हैं और आधुनिक भी?

सितंबर के बीच में खबर आई कि उत्तर प्रदेश के हाथरस में, प्रभुत्वशाली जाति के मर्दों ने 19 साल की एक दलित लड़की का सामूहिक बलात्कार करके उसे मरने के लिए छोड़ दिया था. उसका परिवार गांव के 15 दलित परिवारों में से एक था, जहां 600 परिवारों की बहुसंख्यक आबादी ब्राह्मणों और ठाकुरों की है. भगवाधारी और खुद को योगी आदित्यनाथ कहने वाले प्रदेश के मुख्यमंत्री अजय सिंह बिष्ट इसी ठाकुर जाति से आते हैं. हमलावर कुछ समय से इस लड़की का पीछा कर रहे थे और उसे आतंकित कर रखा था. कोई नहीं था, जिससे वह मदद मांगती. कोई नहीं था, जो उसकी हिफाजत करता. इसलिए वह अपने घर में छुप कर रहती और बहुत कम बाहर जाया करती. उसे और उसके परिवार को पता था कि हालात कैसे खतरनाक रुख ले सकते हैं. लेकिन इस पता रहने का भी कोई फायदा नहीं हुआ. उस दिन, खून से लथपथ उसका शरीर उसकी मां को खेत में पड़ा मिला, जहां वह गायों को चराने ले जाया करती थी. उसकी जीभ करीब-करीब काट ली गई थी, उसकी गर्दन की हड्डी टूट गई थी, जिसके चलते उसके शरीर का एक हिस्सा काम नहीं कर रहा था.

लड़की दो हफ्तों तक जिंदा रही, पहले अलीगढ़ अस्पताल में, और इसके बाद जब उसकी हालत बहुत बिगड़ गई तो दिल्ली के एक अस्पताल में. 29 सितंबर की रात उसकी मौत हो गई. उत्तर प्रदेश पुलिस, जो पिछले साल हिरासत में 400 लोगों की हत्याएं करने के लिए जानी जाती है (देश भर में 1700 ऐसी हत्याओं का यह एक चौथाई है।), रात के सन्नाटे में लड़की की लाश को लेकर उसके गांव के बाहर पहुंची. उसने सदमे में डूबे परिवार को घर में कैद कर दिया, लड़की की मां को इसकी इजाज़त तक नहीं दी कि वह अपनी बेटी को आखिरी बार विदा कह पाती, एक बार उसका चेहरा देख पाती. उसने एक पूरे समुदाय को इससे वंचित किया कि वे अपनी एक प्यारी सदस्य के अंतिम संस्कार को सम्मान के साथ अंजाम दे पाते.

खाकी वर्दी की एक दीवार के घेरे के बीच, आनन फानन में सजाई गई चिता पर उस मार दी गई लड़की की लाश रखी गई, और धुआं अंधेरे आसमान में उठता रहा. दहशत में डूबा लड़की का परिवार मीडिया में उठे शोर से सहमा हुआ था. क्योंकि वे अच्छी तरह जानते थे कि रोशनियों के बुझने के बाद, उन्हें इस शोर के लिए भी सजा मिलने वाली है.

अगर वे बच पाने में कामयाब रहे तो अपनी उस जिंदगी में लौट जाएंगे, जिसके वे आदी बना दिए गए हैं– जाति की गलाज़त में डूबे उन मध्ययुगीन गांवों में जहां वे मध्ययुगीन क्रूरता और अपमान का शिकार बनते हैं, जहां उन्हें अछूत, और इंसानों से कमतर माना जाता है.

दाह संस्कार के एक दिन बाद, पुलिस को जब यह हौसला हो गया कि लाश को सुरक्षित रूप से मिटा दिया गया है, तो उसने ऐलान किया कि लड़की का बलात्कार नहीं हुआ था. उसकी सिर्फ हत्या हुई थी. सिर्फ यही वह आजमाया हुआ तरीका है, जिसके ज़रिए जातीय अत्याचारों में से जाति के पहलू को काट कर अलग कर दिया जाता है. उम्मीद की जा सकती है कि अदालतें, अस्पताल के रेकॉर्ड, और मुख्यधारा का मीडिया इस प्रक्रिया में साथ देंगे, जिसमें हर कदम पर, नफरत से भरे जातीय अत्याचार को एक बदकिस्मत, लेकिन महज एक मामूली अपराध में बदल दिया जाता है. दूसरे शब्दों में, हमारे समाज के सिर से कसूरवार होने का बोझ हट जाता है, संस्कृति और सामाजिक रस्में बरी हो जाती हैं. हमने बार-बार यही होते हुए देखा है। 2006 में खैरलांजी में सुरेखा भोटमांगे और उनके दो बच्चों के कत्लेआम और उनके साथ बरती गई बेरहमी में भी यह प्रवृत्ति बहुत खौफनाक रूप में दिखाई पड़ी थी.

हम अपने मुल्क को इसके गौरवशाली अतीत में वापस ले जाने की कोशिश कर रहे हैं, जिसको पूरा करने का वादा भारतीय जनता पार्टी ने किया है. अगर कर सकें तो कृपया आप अजय सिंह बिष्ट को वोट देना न भूलें. अगर उन्हें नहीं, तो मुसलमानों की ताक में रहने वाला, दलितों से नफरत करने वाला, उनके जैसा कोई भी राजनेता चलेगा या चलेगी. अपलोड किए गए अगले लिंचिंग वीडियो को सोशल मीडिया पर लाइक करना न भूलें. और अपने पसंदीदा, ज़हर उगलने वाले टीवी एंकरों को देखते रहें, क्योंकि हमारे सामूहिक विवेक के पहरेदार वही हैं. और कृपया इसके लिए शुक्रिया कहना भी न भूलें कि हम अभी भी वोट डाल सकते हैं, कि हम दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में रहते हैं, कि हम अपने जिन पड़ोसियों को 'नाकाम राज्य' कहना पसंद करते हैं, उनसे उलट भारत में निष्पक्ष अदालतें कानून की व्यवस्था बनाए रखती हैं.

हाथरस में गांव के बाहर शर्मनाक तरीके से, आतंक के माहौल में किए गए इस दाह संस्कार के महज कुछ ही घंटों के बाद, 30

सितंबर की सुबह, एक विशेष सीबीआई अदालत ने हमारे सामने निष्पक्षता और ईमानदारी का एक ज़ोरदार प्रदर्शन किया.

बड़ी सावधानी से 28 साल तक गौर करने के बाद विशेष अदालत ने उन 32 लोगों को बरी कर दिया, जिन पर 1992 में बाबरी मस्जिद गिराने की साजिश का इलजाम था. यह एक ऐसी घटना थी, जिसने आधुनिक भारत के इतिहास की धारा को बदल दिया था. बरी किए गए लोगों में एक पूर्व गृह मंत्री, एक पूर्व कैबिनेट मंत्री और एक पूर्व मुख्यमंत्री शामिल हैं. ऐसा लगता है कि असल में किसी ने बाबरी मस्जिद नहीं गिराई. कम से कम कानून का ऐसा ही मानना है. शायद मस्जिद ने खुद को गिरा लिया. शायद यह अपने ऊपर गैंती और हथौड़े चला कर खुद ही मिट्टी में मिल गई. शायद उस दिन खुद को श्रद्धालु कहने वाले, अपने चारों ओर जमा, भगवा गमछा बांधे हुए गुंडों की सामूहिक इच्छाशक्ति के आगे वह खुद ही बिखर गई. इन सबके लिए इतने साल पहले 6 दिसंबर का दिन भी शायद उसने खुद चुना था, जो बाबासाहेब आंबेडकर की पुण्यतिथि भी है.

पता चला कि उस पुरानी मस्जिद के गुंबद को औजारों से तोड़ कर गिराने वाले आदमियों के जो वीडियो और तस्वीरें हमने देखीं, गवाहों के जो बयान हमने पढ़े और सुने, उसके बाद के महीनों में मीडिया में जो खबरें छाई रहीं थी, वे सब हमारे मन की कल्पनाएं थीं. एलके आडवाणी की रथयात्रा, जिसके दौरान उन्होंने भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक एक खुले हुए ट्रक में यात्रा की थी, भारी भीड़ के सामने भाषण दिए थे, शहरों में चक्का जाम कर दिया था, सच्चे हिंदुओं को ललकारा था कि वे अयोध्या में ठीक उस जगह पर जमा हों, जहां मस्जिद खड़ी है और राम मंदिर निर्माण में भागीदारी करें.

यह सब कुछ भी नहीं हुआ था. न ही यात्रा के पीछे-पीछे होने वाली वह मौत और तबाही ही कभी असल में हुई. किसी ने 'एक धक्का और दो, बाबरी मसजिद तोड़ दो' का नारा नहीं लगाया. हम सभी एक सामूहिक, राष्ट्रव्यापी मदहोशी के शिकार हो गए थे. किस चीज़ का नशा कर रहे थे हम? हम तक एनसीबी का परवाना क्यों नहीं पहुंचा? सिर्फ बॉलीवुड के लोगों को ही क्यों बुलाया जा रहा है? कानून की नज़र में हम सभी बराबर हैं कि नहीं?

विशेष अदालत के जज ने 2,300 पन्नों के अपने ब्योरेवार फैसले में बताया कि कैसे मस्जिद को गिराने की कोई योजना नहीं थी. मानना पड़ेगा कि यह कमाल का ही एक काम है– एक योजना की गैरमौजूदगी के बारे में 2,300 पन्ने. वे लिखते हैं कि कैसे इसके बारे में कोई भी सबूत नहीं हैं, जिससे यह पता चलता कि आरोपित लोग मस्जिद गिराने की योजना बनाने के लिए 'एक कमरे में' मिले हों. शायद इसलिए कि यह एक कमरे के बाहर, हमारी सड़कों पर, आम सभाओं में, हमारे टीवी के पर्दों पर हुआ, जिसे हम सबने देखा और उसमें भागीदारी की?

खैर, बाबरी मस्जिद गिराने की साजिश का मामला तो अब खत्म हुआ. लेकिन अब एक दूसरी साजिश है जो अभी 'गर्म' है और आजकल 'ट्रेंड' में है. 2020 के दिल्ली कत्लेआम की साजिश, जिसमें उत्तर पूर्व दिल्ली के मज़दूर मुहल्लों में 53 लोग (जिनमें से 40 मुसलमान थे) मार दिए गए और 581 लोग ज़ख्मी हुए. मस्जिदों, कब्रिस्तानों और मदरसों को खास कर निशाना बनाया गया. घरों, दुकानों और कारोबारों को आग लगाई गई और तबाह कर दिया गया, जिनमें से ज्यादातर मुसलमानों के थे.

साजिश के इस मामले में, दिल्ली पुलिस की हजारों पन्नों की चार्जशीट में, एक पैराग्राफ एक टेबल के चारों ओर बैठकर साजिश बनाने वाले कुछेक लोगों के बारे में भी है– हां! एक कमरे के भीतर, जो एक किस्म का ऑफिस बेसमेंट है. उनके भावों से ही आप साफ बता सकते हैं कि वे साजिश रच रहे थे. फिर वहां तो तीर से निशान भी लगाए गए हैं, जो उनकी पहचान कराते हैं, उनके नाम बताते हैं. यह खौफ़नाक है. बाबरी मस्जिद के गुंबद पर खड़े हथौड़ों-गैतियों वाले आदमियों से कहीं अधिक चिंताजनक. उस टेबल के चारों ओर बैठे लोगों में कुछ तो जेल पहुंचा भी दिए गए हैं. बाकी शायद जल्दी ही पहुंचा दिए जाएंगे. गिरफ्तारियों में कुछ ही महीने लगे. बरी होने में बरसों लग जाएंगे– अगर बाबरी मसजिद के फैसले की मिसाल लें, तो शायद 28 बरस. किसे मालूम?

उन लोगों पर जिस यूएपीए (गैरकानूनी गतिविधियां रोकथाम अधिनियम) के तहत आरोप लगाए गए हैं, उसमें करीब-करीब हर चीज़ ही अपराध है, राष्ट्र-विरोधी विचार सोचना भी अपराध है और अपनी बेगुनाही साबित करने का जिम्मा भी आपके ही सिर पर आता है. जितना ज्यादा मैं इसके बारे में पढ़ती हूं, और इस पर अमल करने के पुलिस के तरीके को देखती हूं, उतना ज्यादा लगता है कि यह ऐसा है, मानो किसी होशमंद इंसान से यह कहा जाए कि वह पागलों की एक कमेटी के सामने अपनी होशमंदी साबित करे.

हमें हुक्म है कि हम इस पर भरोसा कर लें कि दिल्ली साजिश मुसलमान छात्रों और एक्टिविस्टों, गांधीवादियों, 'अर्बन नक्सलियों' और 'वामपंथियों' ने रची थी, जो नेशनल पॉपुलेशन रजिस्टर (एनपीआर), नेशनल रजिस्टर ऑफ सिटीजंस (एनआरसी) और सिटीज़नशिप अमेंडमेंट एक्ट (सीएए) को लागू करने का विरोध कर रहे थे. उनका मानना था कि एक साथ मिल कर ये सारे क़दम भारत के मुसलमान समुदाय और उन गरीब लोगों को बेसहारा कर देंगे, जिनके पास कोई 'लीगेसी पेपर्स' यानि विरासत के दस्तावेज नहीं हैं. मेरा भी यही मानना है कि अगर सरकार इस परियोजना को ज़बरदस्ती आगे बढ़ाने का फैसला करती है, तो आंदोलन फिर से शुरू होंगे. उन्हें होना ही चाहिए.

पुलिस के मुताबिक, दिल्ली साजिश के पीछे विचार यह था कि फरवरी में संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति डोनॉल्ड ट्रंप की सरकारी यात्रा के दौरान हिंसा भड़का कर और एक खूनी, सांप्रदायिक झगड़ा खड़ा करके भारत सरकार को शर्मिंदा किया जाए. इस चार्जशीट में जिन गैर-मुस्लिम नामों को शामिल किया गया है, उन पर इन आंदोलनों को 'सेक्युलर रंग' देने की साजिश करने का आरोप लगाया गया है. धरने और आंदोलन की रहनुमाई करने वाली हज़ारों

मुसलमान औरतों पर आरोप लगाया गया है कि वे 'जुटाई गई थीं' ताकि आंदोलन को एक 'जेंडर कवर' ('औरतों की ढाल') मिल जाए. झंडे लहराने, अवाम द्वारा भारतीय संविधान की प्रस्तावना पढ़ने और इन आंदोलनों की पहचान बन गई सारी शायरी, संगीत और प्यार को एक किस्म की बेईमान जालसाजी बता कर खारिज कर दिया गया है, जिसका मकसद असली बदनीयती को छुपाना भर था. दूसरे शब्दों में, आंदोलन असल में जिहादी था (और मर्दों का काम था),बाकी सब ऊपरी सजावट और तड़क-भड़क थी.

नौजवान स्कॉलर डॉ. उमर खालिद को, जिनको मैं अच्छे से जानती हूं, बरसों से मीडिया परेशान करता रहा है, उनके पीछे पड़ा हुआ है और झूठी खबरें फैलाता रहा है. अब पुलिस कहती है कि वे दिल्ली की साजिश रचने वालों में अहम शख्स हैं. उनके खिलाफ जुटाई गई जिन चीजों को पुलिस सबूत बता रही है, वे दस लाख से अधिक पन्नों में हैं. यह वही सरकार है, जिसने कहा था कि एक करोड़ मजदूरों के बारे में इसके पास कोई आंकड़ा नहीं है, जो मार्च में सैकड़ों और कुछ तो हज़ारों मील पैदल चल कर अपने-अपने घरों को पहुंचे थे, जब मोदी ने दुनिया के सबसे बेरहम कोविड लॉकडाउन का ऐलान किया था. सरकार ने कहा कि उसे कुछ पता नहीं है कि कितने मजदूर रास्ते में मारे गए, कितने भुखमरी का शिकार बने और कितने बीमार पड़े.

उमर खालिद के खिलाफ जुटाए गए इन दस लाख पन्नों में जाफराबाद मेट्रो स्टेशन का सीसीटीवी फुटेज शामिल नहीं है, जहां आरोप है कि उन्होंने यह ग़लत साजिशें रचीं और भड़काऊ बातें कीं. 25 फरवरी को, जब हिंसा चल ही रही थी, एक्टिविस्टों ने दिल्ली हाईकोर्ट से अपील की थी कि इस फुटेज को सुरक्षित रखा जाए. लेकिन यह फुटेज डिलीट कर दी गई और इसकी वजह किसी को नहीं मालूम. उमर अब हाल में गिरफ्तार उन सैकड़ों मुसलमानों के साथ जेल में हैं, जिन पर यूएपीए के तहत हत्या, हत्या की कोशिश और दंगे करने का आरोप है. दस लाख पन्नों का 'सबूत' देखने में अदालतों और वकीलों को कितना समय लगेगा?

जिस तरह ज़ाहिर हुआ कि बाबरी मसजिद ने खुद को तबाह कर लिया था, उसी तरह 2020 दिल्ली कत्लेआम की पुलिस की कहानी में, मुसलमानों ने खुद अपनी हत्या की साजिशें रचीं, खुद अपनी मसजिदें जलाईं, खुद अपने घर तबाह किए, अपने बच्चों को यतीम बनाया. और यह सब किया डोनॉल्ड ट्रंप को दिखाने के लिए कि भारत में उनके दिन कितनी मुसीबत में गुज़र रहे हैं.

अपने मामले को मजबूत बनाने के लिए पुलिस ने अपनी चार्जशीट में व्हाट्सऐप पर हुई बातचीत के हज़ारों पन्ने जोड़े हैं. यह बातचीत छात्रों, एक्टिविस्टों और एक्टिविस्टों के सहायता समूहों के बीच चली थी, जो दिल्ली में शुरू हुए आंदोलनों और शांतिपूर्ण धरने वाली अनगिनत जगहों को मदद पहुंचाने और उनके बीच तालमेल बिठाने की कोशिश कर रहे थे. इस बातचीत और उन व्हाट्सऐप ग्रुपों में होने वाली बातचीत में ज़मीन-आसमान का अंतर है, जो 'कट्टर हिंदू एकता' के नाम से चलते हैं. इन दूसरे किस्म के ग्रुपों में लोग सचमुच में मुसलमानों को मारने के बारे में बढ़-चढ़ कर बातें करते हैं और खुलेआम भाजपा नेताओं की तारीफ करते हैं. वह एक अलग चार्जशीट का हिस्सा है.

छात्रों-एक्टिविस्टों की बातचीत, ज्यादातर, जोशो-खरोश और मकसद से भरी हुई है, जैसा कि एक जायज़ गुस्से के अहसास से भरे हुए नौजवान लोगों में हुआ करती है. उन्हें पढ़ना ऊर्जा देने वाला है. यह आपको कोविड से पहले के उन तूफानी दिनों में लौटा ले जाता है, जब एक नौजवान पीढ़ी को अपने पैरों पर आगे बढ़ते देखना कितना उत्साह से भर देने वाला था. इस बातचीत में हम पाते हैं कि कई बार, अधिक अनुभव वाले एक्टिविस्टों ने दखल देकर उन्हें आगाह किया कि उन्हें शांति और सब्र से काम लेने की ज़रूरत है. वे बहसें करते, मामूली तरीकों से झगड़ते – लेकिन लोकतांत्रिक होने का मतलब यह भी तो होता है. इसलिए हैरानी की बात नहीं है कि इन सारी बातों में विवाद का मुद्दा यह था कि शाहीनबाग की हज़ारों औरतों के आंदोलन की शानदार कामयाबी को और जगहों पर दोहराया जाए कि नहीं.

इन औरतों ने ठिठुरती हुई सर्दियों में हफ्तों तक मुख्य सड़क पर धरना देकर आवाजाही ठप कर दी थी, जिससे उथल-पुथल तो हुई थी, लेकिन जिसके चलते उन पर और उनके मकसद पर लोगों का ध्यान भी गया था. शाहीनबाग की दादी बिलकिस बानो को टाइम पत्रिका की 2020 के सबसे प्रभावशाली लोगों की फेहरिस्त में जगह मिली है.

दिल्ली में एक्टिविस्टों की व्हाट्सऐप बातचीत में लोगों में इस बात पर मतभेद था कि पूर्वोत्तर दिल्ली में चक्का जाम किया जाए कि नहीं. चक्का जाम की योजना बनाने में ऐसी कोई नई बात नहीं है– किसानों ने कितनी बार चक्का जाम किया है. आज की तारीख में भी, पंजाब और हरियाणा में किसानों ने चक्का जाम कर रखा है. वे हाल में संसद द्वारा मंजूर किए गए कृषि बिलों का विरोध कर रहे हैं, जिनसे भारतीय खेती का कारपोरेटीकरण हो जाएगा और छोटे किसानों का वजूद संकट में पड़ जाएगा.

दिल्ली आंदोलन के मामले में इन चैट ग्रुपों में कुछ एक्टिविस्टों ने दलील दी कि चक्का जाम का उल्टा असर पड़ेगा. कुछ ही हफ्ते पहले दिल्ली चुनावों में हार के अपमान से उबल रहे भाजपा नेताओं की खुली धमकियों के माहौल में, कुछ स्थानीय एक्टिविस्टों को डर था कि चक्का जाम करने से गुस्सा भड़क सकता है, जिसमें हिंसा का रुख उनके समुदायों की तरफ मुड़ सकता है. वे जानते थे कि किसानों, गुज्जरों या यहां तक कि दलितों द्वारा चक्का जाम करना एक बात है, लेकिन मुसलमानों द्वारा चक्का जाम करना एकदम दूसरी बात है.

यही आज के भारत की हकीकत है. दूसरों ने दलील दी कि जब तक चक्का जाम नहीं किया जाएगा और शहर को अपने हालात पर गौर करने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा तब तक लोग आंदोलनकारियों की अनदेखी करते रहेंगे. जैसा कि पता लगा, कुछ जगहों पर सड़कें जाम की गईं. और जैसा कि अंदेशा जाहिर किया गया था, हिंसक नारे लगाती

हथियारबंद हिंदू भीड़ को वह मौका मिल गया, जिसकी वह ताक में थी.

अगले कुछ दिनों तक, उन्होंने जिस किस्म की क्रूरता दिखाई, उससे हम सब सन्न रह गए. वीडियो में देखा गया कि उन्हें पुलिस का खुला समर्थन हासिल था. मुसलमानों ने जवाब दिया. दोनों तरफ से जान और माल का नुकसान हुआ. लेकिन इसमें कोई बराबरी नहीं थी. हिंसा को भड़कने और फैलने की इजाजत दी गई. हमने अविश्वास के साथ देखा कि पुलिस ने सड़क पर पड़े गंभीर रूप से ज़ख्मी नौजवान मुसलमानों को घेर कर उन्हें राष्ट्रगान गाने पर मजबूर किया. उनमें से एक युवक फ़ैज़ान की जल्दी ही मौत हो गई. संकट में घिरे, डरे हुए लोगों की सैकड़ों कॉलों को पुलिस ने नजरअंदाज किया.

जब आगजनी और हत्या का सिलसिला थमा, और आखिरकार जब सैकड़ों शिकायतों को सुनने की बारी आई, तब पीड़ितों का बयान है कि पुलिस ने उन्हें मजबूर किया कि वे अपनी शिकायतों से अपने हमलावरों के नाम और उनकी पहचान को हटा दें और बंदूकें और तलवारें लहराने वाली भीड़ के सांप्रदायिक नारों को निकाल दें. अलग-अलग लोगों की अपनी खास शिकायतों को सबकी आम शिकायतों में बदल दिया गया, जिसमें सब कुछ आधा-अधूरा था और असली कसूरवारों को बचाने वाला था.

एक व्हाट्सऐप चैट में पूर्वोत्तर दिल्ली में रहने वाले एक खास मुसलमान एक्टिविस्ट ने चक्का जाम के खिलाफ बार-बार अपनी राय जाहिर की थी. आखिर में ग्रुप छोड़ने से पहले उन्होंने अपना आखिरी, कड़वाहट में डूबा हुआ एक संदेश ग्रुप में भेजा. यही वह मैसेज है, जिसको उठा कर पुलिस और मीडिया ने अपना गंदा खेल खेलना शुरू किया और पूरे ग्रुप को बदनाम करने लगी. इस ग्रुप में भारत के सबसे सम्मानित एक्टिविस्ट, टीचर, फिल्मकार शामिल हैं, उन्हें जानलेवा इरादों वाले हिंसक साजिशकर्ताओं के रूप में पेश किया गया. इससे बेतुकी बात और कुछ हो सकती है? लेकिन यह साबित करने में उन्हें बरसों लग जाएंगे कि वे बेगुनाह हैं. तब तक मुमकिन है उन्हें जेल में ही रहना पड़े और उनकी जिंदगियां पूरी तरह तबाह हो जाएं, जबकि असली हत्यारे और हिंसा भड़काने वाले सड़कों पर आजादी से घूमते रहेंगे और चुनाव जीतते जाएंगे. यह पूरी प्रक्रिया ही एक सज़ा है.

इस बीच अनेक स्वतंत्र मीडिया रिपोर्टों, सिटीज़ंस फैक्ट-फाइंडिंग रिपोर्टों और मानवाधिकार संगठनों ने दिल्ली पुलिस को पूर्वोत्तर दिल्ली में हुई हिंसा का भागीदार ठहराया है. एमनेस्टी इंटरनेशनल ने सबसे हिला देने वाले कुछ हिंसक वीडियो को देखने और उनकी फोरेंसिक जांच के बाद, अगस्त 2020 में जारी अपनी एक रिपोर्ट में कहा कि दिल्ली पुलिस आंदोलनकारियों को पीटने और यातना देने तथा भीड़ के साथ मिल कर काम करने की दोषी है. तब से एमनेस्टी पर वित्तीय गड़बड़ी का आरोप लगाया गया है और इसके बैंक खाते सील कर दिए गए हैं. इसको भारत में अपना दफ्तर बंद कर देना पड़ा और यहां काम करने वाले सभी 150 लोगों को अपनी नौकरी गंवानी पड़ी है.

जब हालात संगीन होने लगते हैं, तब अंतरराष्ट्रीय पर्यवेक्षक सबसे पहले चले जाते हैं या जाने पर मजबूर कर दिए जाते हैं. किन मुल्कों में हमने यह पहले भी होते हुए देखा है? सोचिए. या फिर गूगल कर लीजिए.

भारत को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में जगह चाहिए, दुनिया के मामले तय करने के अधिकार में हिस्सा चाहिए. लेकिन यह दुनिया के उन देशों में से भी एक होना चाहता है, जो टॉर्चर के खिलाफ अंतरराष्ट्रीय करारनामे पर दस्तखत नहीं करेंगे. यह एकदलीय लोकतंत्र (एक विडंबना या विरोधाभास) बनना चाहता है, सभी जवाबदेहियों से मुक्त.

पुलिस ने 2020 दिल्ली साजिश की जो बेतुकी कहानी तैयार की है, उतनी ही बेतुकी 2018 भीमा कोरेगांव साजिश की कहानी भी है (बेतुका होना धमकियों और अपमान का हिस्सा है). उसका इरादा एक्टिविस्टों, छात्रों, वकीलों, लेखकों, कवियों, प्रोफेसरों, मजदूर संघों के कार्यकर्ताओं और नाफरमानी करने वाले एनजीओ को गिरफ्त में लेना और जेल भेजना है. इसका इरादा सिर्फ अतीत और वर्तमान की दहशतों का नामोनिशान मिटाना भर नहीं है, बल्कि आने वाले समय के लिए रास्ता साफ करना भी है.

मेरा अंदाजा है कि हमसे उम्मीद की जाती है कि हम दस लाख पन्नों के सबूत जुटाने की कवायदों और 2000 पन्नों के अदालती फैसलों के लिए शुक्रगुजार बनें. क्योंकि ये इसके सबूत हैं कि लोकतंत्र की लाश अभी भी घसीटी जा रही है. हाथरस की उस मार दी गई लड़की के उलट, अभी इसका दाह संस्कार नहीं हुआ है. लाश के रूप में भी अभी यह अपना ज़ोर लगा रही है, इससे चीज़ों की रफ्तार धीमी पड़ रही है. वह दिन दूर नहीं है जब इसको ठिकाने लगा दिया जाएगा और फिर चीज़ें रफ्तार पकड़ेंगी. हम पर जो लोग हुकूमत कर रहे हैं, उनका अनकहा नारा शायद यह हो सकता है- एक धक्का और दो, लोकतंत्र को ध्वस्त करो. ❑

महिमा या दुर्दशा!

नारी किसे कहते हैं?
जो इंसान को जन्म दे, उसे?
या जो जन्म से पहले ही
मार दी जाय, उसे?
या जो धन के अभाव में
शिक्षित नहीं हो पाती, उसे?
जो पत्नी बनकर
परिवार बनाती है, उसे?
या जो पत्नी बनते ही
दहेज की आग में जल जाती है, उसे?
जो पुरुषों को जन्म देने वाली
दात्री है, उसे?
या जो पुरुषों की
हवस का शिकार हो जाती है, उसे?
जो मदर टेरेसा जैसी जीवनदायिनी है उसे?
या जो कल्पना चावला,
किरण बेदी जैसी है, उसे?
जो रोजाना कमाकर
अपना घर चलाती है, उसे?
या जो पुरुषप्रधान समाज द्वारा
प्रताड़ित होती है, उसे?
नारी किसे कहते हैं आखिर...?

–अतुल नारायण आचार्य

जेपी आज होते तो कितने लोग उनका साथ देते!

❑ श्रवण गर्ग

लोकनायक जयप्रकाश नारायण आज अगर हमारे बीच होते तो क्या कर रहे होते! 1974 के 'बिहार आंदोलन' में जो अपेक्षाकृत छोटे-छोटे नेता थे, आज वे ही बिहार और केंद्र की सत्ताओं में बड़ी-बड़ी राजनीतिक हस्तियाँ हैं। कल्पना की जा सकती है कि जेपी अगर आज होते और 1974 जैसा ही कोई आह्वान करते ('सिंहासन ख़ाली करो कि जनता आती है') तो कितने नेता अपने वर्तमान शासकों को छोड़कर उनके साथ सड़कों पर संघर्ष करने का साहस जुटा पाते! ऐसा कर पाना शायद उस जमाने में काफ़ी आसान रहा होगा!

चौबीस मार्च, 1977 को मैं उस समय दिल्ली के राजघाट पर उपस्थित था, जब एक व्हील चेयर पर बैठे हुए अस्वस्थ जेपी को गांधी समाधि पर जनता पार्टी के नव-निर्वाचित सांसदों को शपथ दिलवाने के लिए लाया गया था। वर्तमान की मोदी सरकार में शामिल कुछ हस्तियाँ भी तब वहाँ प्रथम बार निर्वाचित सांसदों के रूप में मौजूद थीं। जेपी के पैर पर पट्टा चढ़ा हुआ था। आग्रह किया जा रहा था कि उनके पैरों को न छुआ जाए। वह दृश्य आज भी याद आता है, जब भीड़ के बीच से निकल कर उनके समीप पहुँचने के बाद मैंने उन्हें प्रणाम किया तो वे हल्के से मुस्कुराए और मैं स्वयं को रोक नहीं पाया ... उनके पैरों के पास पहुँचकर हल्के से स्पर्श कर ही लिया।उन्होंने मना भी नहीं किया।

जेपी ने (और शायद दादा कृपलानी ने भी) सांसदों को यही शपथ दिलवाई थी कि वे गांधी का कार्य करेंगे और अपने आप को राष्ट्र की सेवा के लिए समर्पित करेंगे। राजघाट पर हज़ारों लोगों की उपस्थिति थी। अभिनेता देव आनंद भी वहाँ पहुँचे थे। प्रशंसकों ने उन्हें अपने पैर ज़मीन पर रखने ही नहीं दिए।अपने कंधों पर ही उन्हें बैठाकर पूरे समय घुमाते रहे।शत्रुघ्न सिन्हा भी शायद वहाँ थे। अद्‌भुत दृश्य था। राजघाट की शपथ के बाद के दिनों में दिल्ली के दीनदयाल उपाध्याय मार्ग स्थित गांधी शांति प्रतिष्ठान में जे पी की उपस्थिति में सत्ता के बँटवारे को लेकर बैठकों का जो दौर चला, उसका अपना अलग ही इतिहास है। राजघाट की आशाभरी सुबह के कोई ढाई वर्षों के बाद जेपी ने देह त्याग कर दिया।वे भी तब उतने ही निराश रहे होंगे, जितने आज़ादी की प्राप्ति के बाद गांधी जी रहे होंगे। कांग्रेस बापू को और जनता पार्टी जेपी को जी नहीं पाईं। जेपी के निधन तक उनका जनता पार्टी का प्रयोग उन्हें धोखा दे चुका था।

याद पड़ता है कि जेपी को सबसे पहले राजगीर (बिहार) में 1967 के सर्वोदय सम्मेलन में दूर से देखने का अवसर मिला था।तब तक उनके बारे में केवल सुन-पढ़ ही रखा था।जेपी की देखरेख में ही सम्मेलन की सारी तैयारियाँ हुईं थीं। दलाई लामा भी उसमें आए थे।संत विनोबा भावे तो उपस्थित थे ही, पर जेपी के विराट स्वरूप को पहली बार नज़दीक से देखने का मौक़ा अप्रैल 1972 में मुरैना के जौरा में हुए चम्बल घाटी के दस्युओं के आत्म-समर्पण और फिर उसके अगले माह बुंदेलखंड के दस्युओं के छतरपुर के निकट हुए दूसरे आत्म समर्पण में मिला था। उनका जो स्नेह उस दौरान प्राप्त हुआ, वही बाद में मुझे 1974 में बिहार आंदोलन की रिपोर्टिंग के लिए पटना ले गया। तब मैं दिल्ली में प्रभाष जोशी और अनुपम मिश्र के साथ 'सर्वोदय साप्ताहिक' के लिए काम करता था। पटना गया था केवल कुछ ही दिनों के लिए, पर जे पी ने अपने पास ही रोक लिया उनके कामों में मदद के लिए। पटना में तब जेपी के कदम कुआं स्थित निवास स्थान पर केवल एक ही कमी खटकती थी और वह थी प्रभावती जी की अनुपस्थिति। वे 15 अप्रैल, 1973 को जेपी को अकेला छोड़कर चली गईं थीं।

जे पी और प्रभावती जी के साथ केवल दो ही यात्राओं की याद पड़ती है।पहली तो तब की, जब अविभाजित मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री प्रकाश चंद सेठी के विमान में दोनों को लेने लिए दिल्ली से पटना गया था और वहाँ से हम तीनों बुंदेलखंड के दस्युओं के आत्म समर्पण के लिए खजुराहो के हवाई अड्डे पर पहुँचे थे। दूसरी बार (शायद) उसी वर्ष किसी समय जेपी और प्रभावती जी के साथ रेल मार्ग द्वारा दिल्ली से राजस्थान में चूरू की यात्रा की और वहाँ से वापसी हुई। चूरू में तब अणुव्रत आंदोलन के प्रणेता आचार्य तुलसी की पुस्तक 'अग्नि परीक्षा' को लेकर विवाद खड़ा हो गया था।

जेपी के मित्र प्रभुदयाल जी डाबरीवाला लोक नायक को आग्रह करके चूरू ले गए थे, जिससे कि वहाँ साम्प्रदायिक सौहार्द स्थापित हो सके। जेपी ने कहलवाया कि मुझे उनके साथ चूरू की यात्रा करनी है और मैं तुरंत तैयार हो गया। चूरू की वह शाम भूले नहीं भूलती है, जब जे पी ने पूछा था, उनके साथ टहलने हेतु जाने के लिए ... और मैं भाव-विभोर हो चूरू के एकांत में उस महान दम्पति के साथ घूमने चल पड़ा था।तब दिल्ली में स्वतंत्रता सेनानियों को ताम्रपत्र बाँटे जा रहे थे। मैंने उनसे इस दौरान किए गए कई सवालों के बीच यह भी पूछ लिया था कि 'क्या सरकार आपको स्वतंत्रता सेनानी नहीं मानती?' जेपी शायद कुछ क्षण रुके थे फिर धीमे से सिर्फ इतना भर कहा कि 'हो सकता है, शायद ऐसा ही हो।' मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने तब जेपी से कितने सवाल किए होंगे और उन्होंने क्या जवाब दिए होंगे।क्योंकि मैं तो उस समय अपने इतने निकट उनकी आत्मीय उपस्थिति के आभा मण्डल में ही पूरी तरह से खो गया था।जिस तरह से गांधी नोआख़ाली में दंगों को शांत करवाकर चुपचाप दिल्ली लौट आए थे, वैसे ही जेपी भी चूरू से लौट आए।

मुझे अच्छे से याद है कि हम दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर चूरू जाने वाली ट्रेन की प्रतीक्षा में खड़े थे। जेपी थे, प्रभावती जी थीं, उनके सहायक गुलाब थे और मैं था।शायद प्रभुदयाल जी भी रहे हों। लम्बे प्लेटफ़ार्म पर काफ़ी लोगों की उपस्थिति के बावजूद कोई जेपी को बहुत विश्वास के साथ पहचान नहीं पा रहा था।उनकी तरफ़ लोग देख ज़रूर रहे थे।हो सकता है कि किसी को उनके वहाँ इस तरह से उपस्थित होने का अनुमान ही नहीं रहा होगा। पर जेपी के चेहरे पर किसी भी तरह की अपेक्षा या उपेक्षा का भाव नहीं था।वे निर्विकार थे।बेचैनी मुझे ही अधिक थी कि ऐसा कैसे हो रहा है! याद पड़ता है कि सर्वोदय दर्शन के सुप्रसिद्ध भाष्यकार दादा धर्माधिकारी ने एक बार जेपी को संत और विनोबा को राजनेता निरूपित किया था। ऐसा हो सकता है कि यह सच भी रहा हो! ❑

साजिशों के इस दौर में...

❑ राकेश शुक्ला

हाथरस में एक दलित परिवार की लड़की के साथ जो भी घटित हुआ, उसे मैं दोहरा बलात्कार मानता हूँ। उस बच्ची के साथ हुई हैवानियत ने न केवल हमारे समाज के दोहरे मापदण्डों को उजागर किया है, बल्कि उत्तरप्रदेश सरकार के दोहरे चरित्र का भी पर्दाफाश किया है।

जहां एक तरफ हमारा समाज न्याय की बात करते हुए जातीय कुचक्र का शिकार दिख रहा है, वहीं प्रदेश की सरकार ने न्याय दिलाने की प्रक्रिया ही एक जघन्य अन्याय से शुरू की। समय पर केस न दर्ज करना, बलात्कार के मामले को साधारण छेड़छाड़ का रूप देना, सही समय पर जांच के लिए सीएफएल में सैंपल न भेजना और पीड़िता के सही इलाज की व्यवस्था न करना जैसी शिकायतें उस अत्याचार के सामने फीकी नज़र आती हैं, जो प्रशासन द्वारा प्रायोजित नज़र आता है।

हाथरस में पीड़िता की लाश को अनैतिक तरीके से रातोंरात ठिकाने लगाने के बाद जनता और मीडिया के सवालों में उलझते ही सरकार एक कॉन्सपिरेसी थिअरी लेकर आई, जिसके अनुसार हाथरस में कुछ विदेशी ताकतों द्वारा दंगे फैलाने और देश को तोड़ने की साज़िश की जा रही थी। पूरी तरह से हिन्दू मामले में सरकार ने मुसलमानों को भी घसीट लिया ताकि लोग इसे देश पर हमला मानें। उत्तर प्रदेश के मुखिया योगी आदित्यनाथ ने स्वयं मीडिया के समक्ष कुछ ऐसी बातें कहीं, जो पहली नज़र में ही संदेहास्पद लगती हैं। देश के हर टीवी चैनल पर एक वेबसाइट के स्क्रीनशॉट दिखाये गये, जिसमें वाकई दंगा फैलाने और उससे बचने की तरकीबें बताई गई थीं। सरकार की ओर से ये तक कहा गया कि दंगे फैलाने के लिए विदेशों से 100 करोड़ रुपये की फंडिंग भी हुई।

सरकार अपने उद्देश्य में कामयाब भी हुई और सबका ध्यान पीड़िता की मृत्यु के बाद प्रशासन द्वारा की गईं गलतियों से हटकर देश की सुरक्षा जैसे गंभीर मुद्दे पर टिक गया। यहां तक कि दंगा भड़कने के डर की दुहाई देकर पीड़िता की लाश जलाकर फंसी सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में भी अपनी इस हरकत को न्यायोचित ठहरा दिया।

अचानक से इस पूरे प्रकरण की हवा बदलते ही मुझे कुछ संदेह हुआ और मैंने चर्चा में आयी उस वेबसाइट, जिसका नाम justiceforhathrasvictim.org और justiceforhathrasvictim.carrd.co बताया गया था, की जांच करने की सोची। क्योंकि मैं पिछले 8 सालों से स्वयं वेबसाइट बिज़नेस से जुड़ा हूँ, इसलिए मुझे पता है कि किसी वेबसाइट के बारे में जानकारी जैसे कि वह किसके नाम पर रजिस्टर्ड है, उसे कब पंजीकृत किया गया आदि कैसे निकालते हैं। ये कोई भी कर सकता है और इसके लिए किसी प्रकार की तकनीकी विशेषज्ञता की जरूरत भी नहीं है। मुझे आश्चर्य हो रहा है कि इतनी आसान सी बात हमारे खोजी मीडिया के नज़र से कैसे बच गयी।

दरअसल, यूपी सरकार हाथरस केस में हो रहे बवाल के कारण अपनी छीछालेदर से बचने की हड़बड़ी में एक चूक कर गयी और वह चूक ये थी कि सरकार ने बिना तैयारी किये दंगा भड़काने के उद्देश्य से बनाई गई वेबसाइट तथा जातीय दंगों के सिद्धांत को गंभीर और साम्प्रदायिक रंग देने के लिए भीम आर्मी को बाहर के देशों से 100 करोड़ रुपये की फंडिंग की बात कह डाली। यह सब ठीक ऐसे समय हुआ, जब सरकार का सवालों से जी छुड़ाना मुश्किल होता जा रहा था।

अब चूंकि justiceforhathrasvictim.org और justiceforhathrasvictim.carrd.co अभी जांच प्रक्रिया का हिस्सा है, इसलिए कायदे से इन URLs या Domains को लॉक्ड होना चाहिए था पर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। किसी भी त्रुटि को दरकिनार करने के लिए मैंने 'justiceforhathrasvictim' के साथ अलग-अलग URL extensions (जैसे, .com, .net, .in आदि) लगाकर भी जानकारी हासिल करने की कोशिश की पर नतीज़ा कुछ नहीं निकला।

मैंने 'justiceforhathras' और 'justiceforhathrasvictim' जो कि उस षड्यंत्रकारी वेबसाइट का नाम बताया जा रहा है कि हर संभव extension जोड़कर जांच की और जो परिणाम सामने आया, उसने सरकार के दावे की पोल खोल दी। गूगल पर '.carrd.co' ढूंढने पर मुझे एक सर्विस नज़र आ गयी, जिसका प्रयोग करके इस एक्सटेंशन के साथ वेबपेज बनाए जा सकते हैं। उस ऑनलाइन वेबसाइट निर्माण सेवा का प्रयोग करके मैंने 'justiceforhathrasvictim.carrd.co' की उपलब्धता जांचने की कोशिश की तो उपलब्ध थी। इसका अर्थ ये था कि जिस वेबसाइट को लेकर सरकार और मीडिया द्वारा इतना शोर मचाया गया, वह कभी पंजीकृत हुई ही नहीं थी।

अपने संदेह को और पुष्ट करने के लिए मैं web.archive.org नामक वेबसाइट पर गया, जहाँ किसी वेबसाइट के जन्म और बीते हुए समय में उसकी सामग्री की जांच कर सकते हैं। आसान शब्दों में यह वेबसाइट इंटरनेट की दुनिया का चित्रगुप्त है, जो हर चीज़ का लेखा-जोखा रखता है।

web.archive.org पर उक्त वेबसाइट को सर्च करने पर एक रोचक तथ्य सामने आया। यूपी सरकार ने वेबसाइट द्वारा दंगा भड़काने की ख़बर 4 अक्टूबर को दी थी। जबकि मेरी जांच में सामने आया कि किसी ने 6 अक्टूबर को justiceforhathrasvictim.carrd.co नाम से एक वेबसाइट तो बनाई पर इसपर न तो कोई सामग्री डाली और न ही कोई और हरकत की। 8 अक्टूबर के बाद ये वेबसाइट फिर से अंतर्ध्यान हो गयी।

न केवल justiceforhathras victim.org, बल्कि justiceforhathras victim.carrd.co और इससे संबंधित सारे URL बिक्री के लिए उपलब्ध हैं। इसका मतलब ये हुआ कि जिस वेबसाइट की बात सरकार द्वारा की गई और जिसकी चर्चा समाचार चैनलों पर चलती रही, वह कभी अस्तित्व में थी ही नहीं और अगर थी भी तो इसे 6 अक्टूबर के बाद सबकी आंखों में धूल झोंकने के लिए अस्थायी रूप से पैदा किया गया।

मेरे दावों की पुष्टि इस बात से भी होती है कि बाद में प्रवर्तन निदेशालय के अधिकारियों द्वारा इस पूरे प्रकरण की जांच के बाद भारत में विदेशों से दंगे भड़काने के लिए 100 करोड़ रुपये भेजे जाने की बात खारिज़ कर दी गयी।

जिस दंगे के षड़यंत्र की काल्पनिक कहानी उत्तर प्रदेश सरकार ने गढ़ी, वह एक सफ़ेद झूठ था और इसका मतलब असली मुद्दों से हमारा ध्यान भटकाना और हिंदुओं के मन में मुसलमानों के प्रति नफरत को बढ़ावा देना था। ❑

बहस तलब

काहे री नलिनी तू कुम्हिलानी

❑ रामजी यादव

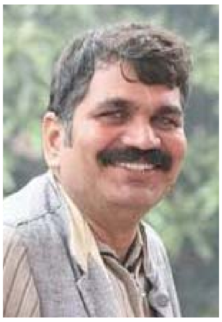

दुनिया के सबसे उपेक्षित कवियों में से एक और सबसे ताकतवर और प्रतिभाशाली कवियों में से भी एक रमाशंकर यादव 'विद्रोही' की कविताओं में औरतों की जो दशा दर्ज है, वह बार-बार उनकी स्थिति की ओर देखने की जरूरत पैदा करती है। अगर वे कहते हैं कि 'हर सभ्यता के मुहाने पर एक औरत की / जली हुई लाश / और इन्सानों की बिखरी हुई हड्डियां' हैं और 'यह लाश जली नहीं है, जलाई गई है/ ये हड्डियां बिखरी नहीं हैं, बिखेरी गई हैं' तो इस बात को बहुत गंभीरता से लेना चाहिए और अपने जीवन की खूब कसकर छानबीन करनी चाहिए कि कहीं हम उस सभ्यता के ही हिस्से तो नहीं हैं। कहीं हमारे आस-पास इन्सानों की हड्डियां तो नहीं बिखरी हुई हैं। और किसी जगह औरत की जली हुई लाश तो नहीं पड़ी हुई है।

विद्रोही अपनी प्रसिद्ध कविता औरत में कहते हैं –'एक औरत की लाश / धरती माता की तरह होती है दोस्तों! / जो खुले में फ़ैल जाती है / थानों से लेकर अदालतों तक / मैं देख रहा हूं कि / जुल्म के सारे सबूतों को मिटाया जा रहा है'।

अभी कुछ ही समय बीता है, जब इसी देश की एक बेटी को रात के अंधेरे में जला दिया गया। उसके अपराधियों को बचाने के लिए पूरी सरकार और सरकारी महकमे अपने घिनौने और षड्यंत्रकारी मंसूबों के साथ लगे हुए हैं। यह क्या है? अपराध किए जाने के बावजूद अपराधी को सज़ा से क्यों बचाया जा रहा है और इस क्रम में अपराधियों का पक्ष लेने वाली सारी ताक़तें क्यों एक संगठित अपराध कर रही हैं? पीड़िता के न्याय के लिए मौजूद एक-एक सबूत वे मिटा रहे हैं। पीड़िता के घर के लोगों को बयान बदलने के लिए धमका रहे हैं। उसके पक्ष में बोलने वालों को रोक रहे हैं। उन पर लाठियां चलवा रहे हैं। क्या यह कोई मामूली बात है? विद्रोही अपनी कविता में संकेत करते हैं कि यह एक सभ्यता है; बलात्कारियों, षड्यंत्रकारियों और हत्यारों की सभ्यता। और इस सभ्यता के मुहाने पर तमाम औरतों की लाशें हैं।

यानी सिर्फ मोलेस्ट करना और रेप करना नहीं, जीभ काट लेना, रीढ़ तोड़ देना और मर जाने पर रात के अंधेरे में बिना उसके घर वालों की उपस्थिति के उसकी लाश जला देना और पूरी बेशर्मी और ताकत से यह प्रचारित करना कि बलात्कार नहीं हुआ। जीभ नहीं काटी गई। ऐसी सभ्यताओं की सबसे बड़ी ताकत बेशर्मी ही होती है। आखिर जब कुछ नहीं हुआ तो फिर आप क्या छिपा रहे हैं? यह छिपाना ही इस सभ्यता का मूल चरित्र है।

विद्रोही कहते हैं कि मुझे विश्वास नहीं है तुम्हारे कहे पर। क्योंकि धर्म की किताबों और पुलिस के रिकार्डों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। क्योंकि सबकुछ एकतरफा लिखा गया है। कभी जलकर मरने के कगार पर पहुंची अस्पताल के बिस्तर पर पड़ी और कभी मर चुकी स्त्री का झूठा बयान दर्ज़ कर लिया जाता है। विद्रोही कहते हैं –'मैं एक दिन पुलिस और पुरोहित / दोनों को एक ही साथ / औरतों की अदालत में तलब करूंगा / और बीच की सारी अदालतों को/ मंसूख कर दूंगा। / मैं उन दावों को भी मंसूख कर दूंगा / जिन्हें श्रीमानों ने / औरतों और बच्चों के खिलाफ पेश किए हैं / मैं उन डिगरियों को निरस्त कर दूंगा / जिन्हें लेकर फ़ौजें और तुलबा चलते हैं / मैं उन वसीयतों को खारिज कर दूंगा / जिन्हें दुर्बल ने भुजबल के नाम किए हुए हैं / मैं उन औरतों को, जो / कुएं में कूदकर या चिता में जलकर मरी हैं / फिर से ज़िंदा करूंगा /और उनके बयानों को / दोबारा क़लमबंद करूंगा /कि कहीं कुछ छूट तो नहीं गया / कि कहीं कुछ बाकी तो नहीं रह गया'।

जो हालात हैं उनको देखते हुए पूरी तरह शक करना चाहिए। हमें अपने अनुभवों के उस संसार में उतरना चाहिए, जिसमें इसलिए नहीं उतर पाए थे, क्योंकि वह दृष्टि साफ नहीं थी, जो पर्दे के पीछे छिपे सच को देख सके। इसलिए जब जिंदगी के एक ऐसे मोड़ पर आए, जहां पितृसत्ता, धर्मसत्ता और राजसत्ता के दमन और झूठ को समझ सकते हैं, तब हमें शक करना चाहिए। हर बात पर। हर घटना पर और छानबीन करनी चाहिए। ये सत्ताएं किसको संरक्षण दे रही हैं और किसका बचाव कर रही हैं, इसे ठीक से समझने की आवश्यकता है। बिना समझे कोई भी आज़ादी का सपना साकार नहीं हो सकता है। इसीलिए इस बात को देखना चाहिए कि हमारे अनुभव संसार में कौन सी सभ्यता कायम है और उसके मुहाने पर कितनी जली हुई लाशें हैं और कितनी हड्डियां बिखरी पड़ी हैं। विद्रोही इसलिए शक कर रहे हैं। वे बताते हैं कि 'क्योंकि मैं उस औरत के बारे में जानता हूं /जो अपने एक बित्ते के आंगन में / अपनी सात बित्ते की देह को/ ता-ज़िंदगी समाए रही और / कभी भूलकर बाहर की तरफ झांका भी नहीं / और जब बाहर निकली तो/ औरत नहीं, उसकी लाश निकली / जो खुले में पसर गई है / मां मेदिनी की तरह'।

कितने मिथक हैं। कितने मुहावरे हैं। कितनी कहानियां हैं। कोई अंत नहीं है। गायों, बैलों, भैंसों और घोड़ों को पगहे से बांधा गया लेकिन औरत के लिए मान्यताओं और लोकाचार का बंधन ही काफी था। ऊंटों, बैलों, घोड़ों और भालुओं को रस्सियों और लोहे की लगाम लगाई जाती है, लेकिन औरतों को गहनों से ही बांध दिया जाता है और जब चाहे तब उनकी नकेल बेरहमी से खींच ली जाती है। और वे क्या विद्रोह कर पाती हैं? बस त्रासदी झेलती रहती हैं, लेकिन त्रासदियों का कोई अंत कब होता है! विद्रोही ने औरतों की इन त्रासदियों के अनेक बेधक चित्र खींचे हैं –'औढरदानी का बूढ़ा गण / एक डिबिया सिंदूर में / बना देता है विधवाओं से लेकर /कुंवारियों तक को सुहागन'। और 'आपको बतलाऊं मैं इतिहास की शुरुआत को /किसलिए बारात दरवाजे पे आई रात को / ले गई दुल्हन उठाकर /और मंडप को गिराकर /एक दुल्हन के लिए आए कई दूल्हे मिलाकर / जंग कुछ ऐसा मचाया कि तंग दुनिया हो गई / मरने वाले की चिता पर ज़िंदा औरत सो गई / तब बजे घड़ियाल / पंडे

शंख घंटे घनघनाये / फ़ौजों ने भोंपू बजाए, पुलिस ने तुरही बजायी / मंत्रोच्चारण यूं हुआ कि मंगलम औरत सती हो / जीते जी जलती रहे, जिस भी औरत के पति हो'।

रमाशंकर विद्रोही सारी औरतों की बात करते हैं और क्या खूब करते हैं, लेकिन उनकी चिंता के केंद्र में नौकरानियां और श्रमजीवी औरतें हैं, जिनकी किस्मत को व्यवस्था ने बड़ी चालाकी से दबा रखा है। वे कहते हैं –'मुझे महारानियों से ज्यादा चिंता / नौकरानियों की होती है'। और वास्तव में जब हम नौकरानियों और श्रमजीवी औरतों की दुनिया में झांकते हैं तो क्या मिलता है? विद्रोही कहते हैं 'कितना खराब लगता है एक औरत को /अपने रोते हुए पति को छोडकर मरना / जबकि मर्दों को / रोती हुई औरतों को / मारना भी / खराब नहीं लगता / औरतें रोती जाती हैं / मरद मारते जाते हैं / औरतें और ज़ोर से रोती हैं / मरद और ज़ोर से मारते हैं / औरतें खूब ज़ोर से रोती हैं / मरद इतने ज़ोर से मारते हैं कि वे मर जाती हैं'।

औरतों की मौतें कितनी बेरहमी से सहन कर ली जाती हैं। बल्कि बेरहमी ऐसी कि सहन करने की भी क्या जरूरत है। जैसा कि राही मासूम रजा साहब लिखते हैं, 'बुखारी साहब एक ही वक्त में कई साहब थे। एक तो वह एमए बीटी थे। फिर वह मुस्लिम एंग्लो हिंदुस्तानी हायर सेकेन्डरी स्कूल के प्रिंसिपल थे, क्योंकि वह हयातुल्लाह अंसारी के मंझले दामाद थे। इसके अलावा वह पीएसपी के मुक़ामी लीडर भी थे और आने वाले चुनाव में पार्टी-टिकट पर चुनाव भी लड़ने वाले थे। वह वहशत के घर जा रहे थे कि शहनाज़ को शहला के घर भेजें, क्योंकि यह तै था कि मुसलमान वोट शहला की मुट्ठी में थे। शहनाज़ से मिलने के बहाने वह यों भी निकला करते। बुतुल से तो उन्होंने प्रिंसिपल बनने के लिए ही शादी की थी। खुदा का शुक्र था कि वह कैंसर से मरने वाली थी। यदि उसकी मौत तक शहनाज़ की शादी न हो तो वह भी कैंडीडेट हो सकते थे।' यह सब केवल एक बानगी है। बहुजन समाज की औरतों की मौत ऐसे ही होती है। बाहर और घर में। उसके लिए पुरुष एक जातिसत्ता है, पितृसत्ता है और पतिसत्ता है। इनके बीच उसे उमड़-घुमड़कर मरना ही है।

लेकिन सबसे अधिक भयावह है गरीबी और अभाव में मर जाना। ऐसी स्त्रियों की संख्या भारत की आबादी की चौथाई से भी ज्यादा है। हिन्दू हों चाहे मुस्लिम, उन्हें गरीबी, पुरुष उत्पीड़न, जाति उत्पीड़न, तलाक, हलाला, इद्दत ही झेलना है। बनारस के बुनकरों के जीवन पर क्लासिक बन चुका अब्दुल बिस्मिल्लाह का उपन्यास 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' तो शुरू ही होता है टीबी से ग्रस्त एक खांसती हुई दिनचर्या से –'जाड़े की धूप इस छत से लेकर उस छत तक पीले कतान की तरह फैली हुई है। इस छत पर अलीमुन एक ओर बने बावर्चीखाने में आग सुलगाते जा रही है और उस छत पर कमरून कतान फेरने की तैयारी में व्यस्त है। अचानक दोनों छतें बोल उठती हैं –'का हो अलीमुन अभइन तक आग नाहीं बारेव का?'

'नाहीं हो, देखो अब जाइला बारे। एतना-सा काम रहा करे के एही से एतनी अबेर हो गई हो। तूँ का करेतू ?' अलीमुन को टीबी हो गई है। मतीन को मालूम है। लेकिन वह कुछ नहीं कर सकता। घर का जो काम है, वह बीवी को करना ही होगा। फेराई-भराई, नरी-ढोटा, हांड़ी-चूली सभी कुछ करना होगा। बिना किए काम न चलेगा। और रहना भी होगा पर्दे में। खुली हवा में घूमने का सवाल नहीं। समाज के नियम सत्य हैं। उन्हें तोड़ना गुनाह है। मतीन जानता है।'

बुनकरों के जीवन का यह सत्य है। वहां की स्त्रियों का यह सत्य है। इस सत्य को नकारना किसी के बूते का नहीं है। जो कमरून अलीमुन का हाल चाल पूछ रही है, उसके पति लतीफ ने उसे तलाक दे दिया। वह अपने बड़े बेटे के साथ कहीं दूर रहने लगी। एक गृहस्थी टूट गई। परिवार बिखर गया। लतीफ को पश्चाताप होने लगा कि यह उसने क्या किया। लेकिन बिना हलाला के वह कैसे साथ रह सकता है। अब तो वह उसके लिए हराम हो गई है। समाज के बनाए नियम तोड़ना क्या आसान है? लेकिन मनुष्य का मन और उसकी संवेदना का क्या होगा? एक दिन लतीफ़वा ज़िद पकड़कर बैठ गया था कि तुम्हें मेरे साथ चलना ही होगा।

कमरून चली तो आई वापस, लेकिन अपने ही घर में वह बंदिनी की तरह रहने लगी। किस मुंह से बाहर निकलती? दुनिया में क्या ऐसा भी कहीं हुआ है कि तलाक़शुदा मुसलमान औरत बगैर 'हलाला' के फिर अपने शौहर के साथ आकर रहने लगे? मज़हब के साथ इतना बड़ा खिलवाड़! इतना बड़ा गुनाह! अगर आज वह अलग न रहकर अपने मां-बाप के साथ रहती तो क्या ऐसा हो सकता था? काटकर फेंक दी जाती वह! उसने पूरी बिरादरी की नाक कटा दी है। लगता है कि यह दुनिया ही औरतों के लिए नरक है, जिसे वे झेल रही हैं। पितृसत्ता, धर्मसत्ता, राजसत्ता सब मिलकर उसके खिलाफ एक दावानल दहकाए हुए हैं। देवदासी, जोगिनी, बेड़िनी, मुरली, विधवाएं, दलित, गरीबी में सिर से पांव तक लिथड़ी औरतें इसी दुनिया का सच है, जहां देवता निवास करते हैं।

कबीर पूछते हैं – 'काहें री नलिनी तू कुम्हिलानी / तेरे ही नाल सरोवर पानी / जल में उतपति जल में वास / जल में नलिनी तोर निवास / ना तलि तपत न ऊपर आगि / तोर हेतु कहु कासनि लागि / कहे कबीर जे उदकि समान / ते नहीं मुए हमारे जान'। यह वैसा ही आश्चर्यजनक दृश्य है, जैसा कंबल के बरसने और पानी के भींगने का या फिर सिंह के खड़े होकर गाय चराने का है। जिसका जन्म ही जल में हुआ हो और जो जल में ही रहती आई हो, वह कमलिनी क्यों मुरझा रही, यह बड़े अचरज की बात है। अचरज की बात यह है कि न तो सरोवर की तलहटी तप रही है और न ही ऊपर आग लगी है। पाखंडी लोग कहते हैं कि जहां तुम्हारी पूजा होती है, वहां देवता बसते हैं फिर भी तुम क्यों इतनी पीली होती जा रही हो? इस दुनिया में कुछ बदल नहीं रहा है। कहीं उथल-पुथल नहीं मची है, फिर भी तुम ऐसी कुम्हिलाई हुई हो। कोई न कोई बात तो ऐसी है, जिससे तुम्हारी रगों में जहर भर रहा है। और सच मायने में कबीर जिस ओर इशारा कर रहे हैं, वह भयानक यथार्थ है। तालाब का पानी सड़ जाने से कमलिनी कुम्हिला रही है। पूरे जल में जहर घुला हुआ है और समाज में स्त्रीविरोधी माहौल है। कुछ भी दिख नहीं रहा है। पाखंड निर्लज्जता की हद तक चमक रहा है, लेकिन इन औरतों की चीख दर्ज नहीं हो रही है। लगता है, धर्म की ध्वजा औरतों की गुलामी के ऊपर गाड़ी हुई है और लहरा रही है।

कबीर साहब संकेत कर रहे हैं कि नलिनी इसलिए ही मुरझा रही है क्योंकि वह जिस सरोवर में है, वहां चारों ओर जहर फैल चुका है, लेकिन उस पर संतों का ध्यान नहीं जा रहा है और वे अन्याय का झंडा बुलंद किए हुए हैं। ❑

महादेश के व्यंग्य

❑ नितिन ठाकुर

अब ये महादेश स्वयं में एक व्यंग्य है. इसका इस तरह चलाया जाना जैसे चल रहा है, आप और हम पर कटाक्ष है. सारी आलोचनाएं विपक्षी कुंठाएं हैं और उस अवतार का शासन देवताओं का आशीर्वाद. बैकफुट ही मास्टर स्ट्रोक है, फ्रंटफुट केवल कानून बदलने में इस्तेमाल होता है, सेक्युलरिज़्म की पिच खुदी पड़ी है और समाजवाद डकवर्थ-लुइस नियम जैसा है, जो यदाकदा याद किया जाता है मगर समझ से सबके परे है; बनाने वालों के भी और बनाने वालों के हाथ बननेवालों के भी.

हर मुसीबत मौका है. मौकापरस्त फोर्ब्स की सूची का रत्न है. महारत्न फोर्ब्स का मालिक है और सूची की ख़बर छापने वाला उसके पे-रोल पर है. मौत मुक्ति है की तर्ज पर निजीकरण युगों में एक बार आने वाला अवसर है. किसान कुलबुलाकर घर से निकलता भी है तो उसकी समझाइश के लिए पार्टी कार्यकर्ता भी निकल पड़ता है, लेकिन उसे कोई नहीं बताता कि इस बेगार का पैसा कब मिलेगा क्योंकि अभी 'दूसरी आज़ादी' के उधार केंद्र पर बाकी हैं.

रेल फेल, जहाज़ फेल, सरकारी धंधे फेल, मज़दूर के कंधे फेल, जीडीपी फेल, पीडीपी फेल मगर ख़बरों में केवल है जुकर-मुकेश का मेल जो फेल नहीं होता, जो फेल हो भी नहीं सकता. उसे पास कराने के लिए तन मन धन से देश जुटा है. देश कहूं तो सरकार समझिये, कम कहूं तो ज्यादा समझिये. कम ही बोलने में समझदारी है. मैं तो कहता हूं कि बोलिये भी मत. बोलना साजिश हो चुका है, ये तब समझ आएगा, जब जेलर बिल्ला नंबर के तौर पर नाम रजिस्टर में दर्ज कर चुका होगा, जिसमें और भी कई नाम लिखे हैं. कई तो वे हैं, जो सालों साल से जेल में होकर भी मोबाइल पर बाहर वालों से रंगदारी मांगते रहे और ये इतनी बार हुआ कि अब ख़बर लिखने वाले ऐसी बातों को रुटीन कह कर कूड़ेदान के सुपुर्द कर देते हैं.

कूड़ेदान में तो और भी कई ख़बरें हैं, जो लालाजी के अख़बार और चैनल पर आने से पहले मुड़े-तुड़े कागज़ में तब्दील हो गयीं. इनमें कुछ आदिवासियों का समाचार लाती थीं और कई बताती थीं कि दलितों की हत्या और रेप के बावजूद पुलिस अभी हिसाब लगा रही है कि व्यवस्था गिरफ्तारी करके बनी रहेगी या नहीं करके. नेता जी कहीं नाराज़ तो न हो जाएंगे और ये भी संभव है कि आरोपी फेक एनकाउंटर से पहले पुलिस पर ही गोली चलाकर एक सन्नाटा फैला दे. मैं किसके लिए रोऊं? उन निर्दोष मरने वालों के लिए या फिर न्याय के लिए, जिसकी कार उलट जाती है रपटीली सड़कों पर, जहां कल रात तेज़ाबी बारिश हुई थी?

मैं जानता हूं कि शेखों के शहर में कोलेजियम सजे हैं, जहां पटकथा रटाकर योद्धा उतारे जा चुके हैं. वे नकली वार प्रतिवार से सबका दिल मोह लेंगे. रोमन सम्राट कोमोडस ने भी बीमारी और भूख से मरती जनता से नए रोम का वादा किया था. उसने खेलों का आयोजन किया. भूख से मर रहे लोग रोमांच में मरने लगे. तालियां पीटकर हाथ लाल कर लिए. रोमन संसद की छाती पर चढ़कर कोमोडस ने धीरे से उन सबके मृत्युपत्र तैयार कर दिए, जो असहमत थे लेकिन हर किसी को हर वक्त बेवक़ूफ़ कैसे बनाया जाता? आखिर में सम्राट का नाम इतिहास ने दर्ज तो किया, मगर पतन लाने वाले यमदूत की तरह.

प्रश्न है कि महादेश के ये व्यंग्य एक आलेख में कैसे समा सकते हैं? ये विडम्बनाएं तो किसी विशाल ग्रंथ के श्लोक बनकर ही अमर हो सकती हैं, जिसका लेखक पेशाब की बदबू से भरे किसी कमरे में पान की पीक से लाल हुई दीवार पर सिर फोड़कर मर सकता है. आने वाली पीढ़ियां उसका नाम भी याद नहीं रखेंगी. वे याद रखेंगी महज़ ये मज़ाक, जो पूरी संजीदगी से दोहराया जा रहा है हर दिन या फिर उस महापुरुष को, जिसने बुद्धि से तर्क अलग करके अभी अभी खाली सुरंग में हाथ हिलाकर बुदबुदाया है- सब चंगा सी! आखिर हर रोम की नियति एक-सी नहीं होती मगर हर सुकरात अपने हिस्से का हेवलॉक मजबूर होकर मुस्कुराते हुए ज़रूर पियेगा. ❑

खिदमत का आलम

❑ चंचल

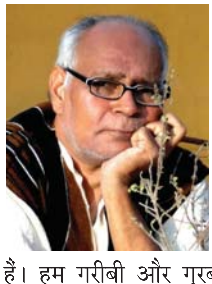

जिल्लेसुभानी! मुल्क की मिल्कियत कौम होती है। कौम की खिदमत का वास्ता देकर आप सहिबे मसनद हुए हैं और खिदमत का आलम यह है कि हम अपने ही मुल्क में दर बदर हो रहे हैं। हम गरीबी और गुरबत से शिकायत नहीं कर रहे। आज जो हालात हैं, उन्हें हम पहले से ही झेलते आ रहे हैं या यूं कह सकते हैं कि अंग्रेज बहादुर की सरकार जब यहां से रुखसत हुई थी, हमें कंगाली सौंप गयी थी लेकिन हम खुशकिस्मत रहे कि हमारे रहनुमा, रहजन नहीं थे, बापू की सोहबत से तप कर निकले लोग थे, गरीबी और गुरबत को समझते थे, गरीबी और गुरबत के चलते कौम का हौसला न पस्त हो, उसमें उठने और मुल्क को उठाने का जज्बा बना रहे, इसलिए उनकी भरपूर कोशिश रही कि उनकी निजी जिंदगी कहीं से भी यह ऐलान न करे कि रिआया और हुकूमत के बीच बड़ा फासला है। उन रहनुमाओं की कोशिश रही कि वे अपनी अवाम के साथ रहें, कम से कमतर सुविधा के साथ सहज जिंदगी बसर करें। और उन्होंने यह सब किया क्योंकि उन्हें यह अदब, यह रवायत लंबे संघर्ष से हासिल हुई थी कि हुकूमत की ताकत से ज्यादा ताकतवर ताकत अवाम की होती है, बशर्ते कौम का हौसला बना रहे। उनमें अपने रहनुमा के सामने खड़ा होने पर कम से कम फासला मिले। बापू को छोड़ दीजिये उनकी सादगी तो दुनिया जानती है, उनके उत्तराधिकारी भी अपने शान व शौकत से परे हट कर आम जन के नजदीक पहुंचने की कोशिश करते रहे। उनको यह मालूम रहा कि कौम की कमर गरीबी और गुरबत से नहीं झुकती, बल्कि कौम का हौसला पस्त होता है गैर बराबरी से। सारी दुनिया ने देखा कि भारत को अलम्बरदार ने अपनी यात्रा के लिए अमरीका के राष्ट्रपति के विमान से भी ज्यादा खर्चीला और तामझाम से भरपूर ज्यादा महंगा विमान तैयार कराया है, जिस पर कुल लागत अयी है 8548 करोड़ रुपये।

यकीन करिये, ये फिजूलखर्ची अपराध की सीमा के आखिरी हद पर है। अभी कल की बात है, जब आधा हिंदुस्तान पलायन कर पैदल तपती सड़क पर निकल पड़ा था नंगे पांव।

जनाब! आपके आलीशान विमान के बगल नंगे पैर चलती महिलाओं का एक काफिला है, आज भी इनकी आंख में पंडित नेहरू का वह चेहरा है, जो लखनऊ की सड़क पर इन्हीं के साथ नमक बेचते हुए, पुलिस से लबे सड़क पिटे थे। लालबहादुर शास्त्री नाम का देश का प्रधानमंत्री अपने आवास में चारपाई पर बैठा अपनी फ़टी धोती सिल रहा है। गुलजारी लाल नंदा का सामान सड़क पर फेंका गया था, क्योंकि उनके पास उनका कोई मकान नही था। 77 में इंदिरा गांधी ने पुलिस के सामने दोनो हाथ बढ़ा दिए थे- लगाओ हथकड़ी हम हुकूमत से माफी नही मांगेंगे। हां, जनता से अपनी गलतियों के लिए सार्वजनिक रूप से माफी मांगती हूँ', यह वही इंदिरा थीं, जिन्होंने निक्सन को चुनौती देकर उसका गुरुर तोड़ दिया था।

जनाबेआली! हम तो एक रेखाचित्र भर खींच रहे हैं, देख लीजिए कि मुल्क की ये दो मुख्तलिफ धाराएं हैं, जो एक दूसरे से विपरीत दिशा में जा रही हैं। यह मुल्क को क़त्तई कमजोर करेगा। ❑

गंगा को निर्मल रहने दो, गंगा को अविरल बहने दो

❑ अनिल प्रकाश

केंद्र की नई सरकार ने गंगा नदी से जुड़ी समस्याओं पर काम करने का फैसला किया है। तीन-तीन मंत्रालय इस पर सक्रिय हुए हैं। एक बार पहले भी राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में गंगा की सफाई की योजना पर बड़े शोर-शराबे के साथ काम शुरू हुआ था। गंगा ऐक्शन प्लान बना था। मनमोहन सिंह सरकार ने तो गंगा को राष्ट्रीय नदी ही घोषित कर दिया। मानो पहले यह राष्ट्रीय नदी नहीं रही हो। अब तक लगभग बीस हजार करोड़ रुपए खर्च करने के बावजूद गंगा का पानी जगह-जगह पर प्रदूषित और जहरीला बना हुआ है। गंगा का सवाल ऊपर से जितना आसान दिखता है, वैसा है नहीं। यह बहुत जटिल प्रश्न है। गहराई से विचार करने पर पता चलता है कि गंगा को निर्मल रखने के लिए देश की कृषि, उद्योग, शहरी विकास तथा पर्यावरण संबंधी नीतियों में मूलभूत परिवर्तन लाने की जरूरत पड़ेगी। यह बहुत आसान नहीं होगा। केवल रिवर फ्रंट बनाकर उसकी सजावट करने का मामला नहीं है।

दरअसल, 'गंगा को साफ रखने' या 'क्लीन गंगा' की अवधारणा ही सही नहीं है। सही नारा या अवधारणा यह होनी चाहिए कि 'गंगा को गंदा मत करो'। थोड़ा बहुत शुद्धिकरण तो गंगा खुद ही करती है। उसके अंदर स्वयं शुद्धिकरण की क्षमता है। जहां गंगा का पानी साफ हो, वहां से जल लेकर यदि किसी बोतल में रखें तो यह सालों साल सड़ता नहीं है। वैज्ञानिकों ने हैजे के जीवाणुओं को इस पानी में डालकर देखा तो पाया कि चार घंटे के बाद हैजे के जीवाणु नष्ट हो गए थे। अब उस गंगा को कोई साफ करने की बात करे तो इसे नासमझी ही माना जाएगा। अगर कोई यह समझता है कि लोगों के नहाने या कुल्ला करने से या भैंसों के नहाने या गोबर करने से गंगा या अन्य कोई नदी प्रदूषित होती है तो यह ठीक उसी प्रकार हंसने की बात होगी, जैसे कोई शहरी आदमी जौ के पौधे को गेहूं का पौधा समझ बैठे या बाजरे के पौधे को मक्के या गन्ने का पौधा समझ बैठे। गंगा के संबंध में मोदी सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के अफसर और मंत्रिगण जो घोषणाएं कर रहे हैं, उससे तो ऐसा ही लग रहा है।

कुछ साल पहले आगरा में यमुना नदी में तैर कर नहा रही लगभग 35 भैंसों को पुलिस वाले पकड़कर थाने ले आए थे और भैंस वालों ने कई दिन बाद बड़ी मुश्किल से भैंसों को थाने से छुड़ाया था। यमुना में जहरीला कचरा बहाने वाले फैक्ट्री के मालिक या शहरी मल-जल बहाने वाले म्युनिसिपल कॉरपोरेशन के अधिकारी पुलिस के निशाने पर कभी नहीं रहे।

गंगा तथा अन्य नदियों के प्रदूषित और जहरीला होने का सबसे बड़ा कारण है कल-कारखानों के जहरीले रसायनों का नदी में बिना रोकटोक के गिराया जाना। उद्योगपतियों के प्रतिनिधि बताते हैं कि गंगा के प्रदूषण में इंडस्ट्रीयल एंफ्लूएंट सिर्फ आठ प्रतिशत जिम्मेदार है। यह आंकड़ा विश्वास करने योग्य नहीं है। दूसरी बात यह कि जब कल कारखानों या थर्मल पावर स्टेशनों का गर्म पानी तथा जहरीला रसायन या काला या रंगीन एंफ्लूएंट नदी में जाता है, तो नदी के पानी को जहरीला बनाने के साथ-साथ नदी की स्वयं शुद्धिकरण की क्षमता को नष्ट कर देता है। नदी में बहुत से सूक्ष्म वनस्पति होते हैं, जो सूरज की रोशनी में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपना भोजन बनाते हैं, गंदगी को सोखकर ऑक्सीजन मुक्त करते हैं।

इसी प्रकार बहुतेरे जीव जन्तु भी सफाई करते रहते हैं। लेकिन उद्योगों के प्रदूषण के कारण गंगा तथा अन्य नदियों में भी जगह-जगह डेड जोन बन गए हैं। कहीं आधा किलोमीटर, कहीं एक किलोमीटर तो कहीं दो किलोमीटर के डेड जोन मिलते हैं। यहां से गुजरने वाला कोई जीव-जन्तु या वनस्पति जीवित नहीं बचता। क्या उद्योगों, बिजलीघरों के गर्म पानी व जहरीले कचरे को नदी में बहाने पर सख्ती से रोक लगेगी? क्या प्रदूषण के लिए जिम्मेदार उद्योगों के मालिकों, बिजलीघरों के बड़े अधिकारियों को जेल भेजने के लिए सख्त कानून बनेंगे और उन्हें मुस्तैदी से लागू किया जाएगा? अगर ऐसा नहीं हुआ तो गंगा निर्मल कैसे रहेगी?

गंगा तथा अन्य नदियों के प्रदूषण का बड़ा कारण है खेती में रसायनिक खादों और जहरीले कीटनाशकों का प्रयोग। ये रसायन बरसात के समय बहकर नदी में पहुंच जाते हैं तथा जीव जन्तुओं और वनस्पतियों को नष्ट करके नदी की पारिस्थितिकी को बिगाड़ देते हैं। इसलिए नदियों को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए इन रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों पर दी जाने वाली भारी सब्सिडी को बंद करके पूरी राशि जैविक खाद तथा जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करने वाले किसानों को देनी पड़ेगी और अंततः रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों पर पूर्ण रोक लगानी पड़ेगी।

जैविक खेती में उत्पादकता कम नहीं होती है, बल्कि अनाज, सब्जी तथा फल भी जहर मुक्त और स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं। इसमें सिंचाई के लिए पानी की खपत भी बहुत घटती है और खेती की लागत घटने से मुनाफा भी बढ़ता है। अगर इस पर कड़ा फैसला लिया गया तभी नदियों को साफ रखा जा सकेगा।

शहरों के सीवर तथा नालों से बहने वाले एंफ्लूएंट को ट्रीट करके साफ पानी नदी में गिराने के लिए बहुत बातें हो चुकी हैं। केवल गंगा के बगल के क्लास–1 के 36 शहरों में प्रतिदिन 2,601.3 एमएलडी गंदा पानी निकलता है, जिसका मात्र 46 प्रतिशत ही साफ करके नदी में गिराया जाता है।

क्लास–2 के 14 शहरों से प्रतिदिन 122 एमएलडी एंफ्लूएंट निकलता है, जिसका मात्र 13 प्रतिशत ही साफ करके वापस नदी में गिराया जाता है। गंगा के किनारे के कस्बों तथा छोटे शहरों के प्रदूषण की तो सरकार चर्चा भी नहीं करती। शहरी मलजल तथा कचरा ऐसी चीजें हैं, जिन्हें सोना बनाया जा सकता है। देश के कुछ शहरों में इस कचरे से खाद बनाई जाती है और पानी को साफ करके खेतों की सिंचाई के काम में लाया जाता है। ऐसा प्रयोग गंगा तथा अन्य नदियों के सभी शहरों-कस्बों में किया जा सकता है। अब तक यह मामला टलता रहा है। इसमें भी मुस्तैदी की सख्ती से जरूरत है। प्रधानमंत्री के संसदीय क्षेत्र वाराणसी में वरुणा नदी गंगा में मिलती है। वरुणा शहर की सारी गंदगी गंगा में डालती है। क्या प्रधानमंत्री का ध्यान इस पर गया है? अगर न देखा हो तो जाकर देख लें।

गंगा या अन्य नदियों पर नीति बनाने और उसके क्रियान्वयन से पहले उन करोड़ों करोड़

लोगों की ओर नजर डालना जरूरी है, जिनकी जीविका और जिनका सामाजिक सांस्कृतिक जीवन इनसे जुड़ा है। गंगा पर विचार के साथ-साथ गंगा में मिलने वाली सहायक नदियों के बारे में विचार करना जरूरी है। आठ राज्यों की नदियों का पानी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गंगा में मिलता है। इन नदियों में होने वाले प्रदूषण का असर भी गंगा पर पड़ता है। गंगा पर शुरू में ही टिहरी में तथा अन्य स्थानों पर बांध और बराज बना दिए गए। इससे गंगा के जल प्रवाह में भारी कमी आयी है। गंगा के प्रदूषण का यह भी बहुत बड़ा कारण है। बांधों और बराजों के कारण नदी की स्वाभाविक उड़ाही (डी-सिल्टिंग) की प्रक्रिया रुकी है। गाद का जमाव बढ़ने से नदी की गहराई घटती गई है और बाढ़ तथा कटाव का प्रकोप भयावह होता गया है। यह नहीं भूलना चाहिए कि गंगा में आने वाले पानी का लगभग आधा नेपाल के हिमालय क्षेत्र की नदियों से आता है। हिमायल में हर साल लगभग एक हजार भूकंप के झटके रिकॉर्ड किये जाते हैं। इन झटकों के कारण हिमालय में भूस्खलन होता रहता है। बरसात में यह मिट्टी बहकर नदियों के माध्यम से खेतों, मैदानों तथा गंगा में आती है। हर साल खरबों टन मिट्टी आती है। इसी मिट्टी से गंगा के मैदानों का निर्माण हुआ है। यह प्रक्रिया जारी है और आगे भी जारी रहेगी।

1971 में पश्चिम बंगाल में फरक्का बराज बना और 1975 में उसकी कमीशनिंग हुई। जब यह बराज नहीं था तो हर साल बरसात के तेज पानी की धारा के कारण 150 से 200 फीट गहराई तक प्राकृतिक रूप से गंगा नदी की उड़ाही हो जाती थी। जब से फरक्का बराज बना, सिल्ट की उड़ाही की यह प्रक्रिया रुक गई और नदी का तल ऊपर उठता गया। सहायक नदियां भी बुरी तरह प्रभावित हुईं। जब नदी की गहराई कम होती है तो पानी फैलता है और कटाव तथा बाढ़ के प्रकोप की तीव्रता को बढ़ाता जाता है। मालदह-फरक्का से लेकर बिहार के छपरा तक यहां तक कि बनारस तक भी इसका दुष्प्रभाव दिखता है।

फरक्का बराज के कारण समुद्र से मछलियों की आवाजाही रुक गयी। फीश लैडर बालू-मिट्टी से भर गया। झींगा जैसी मछलियों की ब्रीडिंग समुद्र के खारे पानी में होती है, जबकि हिलसा जैसी मछलियों का प्रजनन ऋषिकेष के ठंडे मीठे पानी में होता है। अब जब यह सब प्रक्रिया रुक गई तो गंगा तथा उसकी सहायक नदियों में 80 प्रतिशत मछलियां समाप्त हो गयीं। इससे भोजन में प्रोटीन की कमी हो गई। पश्चिम बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश में अब रोजाना आंध्र प्रदेश से मछली आती है। इसके साथ ही मछली से जीविका चलाकर भरपेट भोजन पाने वाले लाखों-लाख मछुआरों के रोजगार समाप्त हो गए।

इसलिए जब गडकरी साहब ने गंगा में हर 100 किलोमीटर की दूरी पर बराज बनाने की बात शुरू की, तब गंगा किनारे जीने वाले करोड़ों लोगों में घबराहट फैलने लगी। गंगा की उड़ाही की बात तो ठीक है, लेकिन बराजों की श्रृंखला खड़ी करके गंगा की प्राकृतिक उड़ाही की प्रक्रिया को बाधित करना सूझबूझ की बात नहीं है। इस पर सरकार को पुनर्विचार करना चाहिए। नहीं तो सरकार को जनता के भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा और लेने के देने पड़ जाएंगे। आज से 32 साल पहले 1982 में कहलगांव (जिला–भागलपुर ढबिहारल) से गंगा मुक्ति आंदोलन की शुरुआत हुई थी। जन प्रतिरोध के कारण 1990 आते-आते गंगा में चल रही जमींदारी और पूरे बिहार के 500 किलोमीटर गंगा क्षेत्र सहित बिहार की सभी नदियों में मछुआरों के लिए मछली पकड़ना कर मुक्त कर दिया गया था। गंगा मुक्ति आंदोलन ने ऊपर वर्णित सवालों को लगातार उठाया और लाखों लाख लोग उसमें सक्रिय हुए थे। आज भी वह आग बुझी नहीं है। आग अंदर से सुलग रही है। गंगा के नाम पर गलत नीतियां अपनाई गई तो बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश में यह ठंडी आग फिर से लपट बन सकती है। ❑

पटना विश्वविद्यालय में सर्वोदय बुक स्टाल का शुभारम्भ

गांधी जयंती 2 अक्टूबर को पटना विश्वविद्यालय परिसर में सर्वोदय बुक स्टाल का शुभारंभ हुआ। गांधी-विचार-प्रसार की दृष्टि से विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं और शिक्षकों के बीच गांधी साहित्य पहुंचाने के लिए इस स्टाल की संस्तुति का अनुरोध सर्व सेवा संघ प्रकाशन ने पटना विश्वविद्यालय से किया था।

बुक स्टाल का उद्घाटन करते हुए पूर्व सांसद और वयोवृद्ध सर्वोदयी नेता डॉ. रामजी बाबू ने कहा कि 2 अक्टूबर का दिन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एवं लालबहादुर शास्त्री की जयंती का दिन है। इस अवसर पर इस सराहनीय पहल के लिए हम पटना विश्वविद्यालय प्रशासन को धन्यवाद देते हैं।

वास्तव में बिहार के सभी विश्वविद्यालयों में 'सर्वोदय बुक स्टाल' की स्थापना होनी चाहिए, ताकि छात्र-छात्राओं को गांधी-विचार पढ़ने व समझने का सहज अवसर मिल सके और उनमें मानवीयता एवं शांतिप्रियता जैसे उत्कृष्ट विचार समाहित हो सकें। हमारे लिए यह प्रसन्नता की बात है कि इस क्रम में पटना विश्वविद्यालय पहले स्थान पर है।

उन्होंने कहा कि गांधीजी के शांति के विचार और खादी ग्रामोद्योग के उपयोग को लेकर हम सबको हर गांव, हर मोहल्ले में जाना होगा, तभी कुछ प्रकाश दिखायी दे सकता है। आज हम तीसरे विश्वयुद्ध के कगार पर हैं, इससे बचने का एकमात्र रास्ता गांधी-विचार और शांति सेना ही है। सर्वोदय बुक स्टाल की इस कड़ी में एक सार्थक भूमिका है। इसका विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं को निश्चित रूप से लाभ मिलेगा।

पटना विश्वविद्यालय के पूर्व शिक्षक डॉ. रघुनंदन शर्मा ने परिसर में स्थापित हो रहे सर्वोदय बुक स्टाल के प्रति अपनी प्रसन्नता जाहिर करते हुए कहा कि आज का दिन देश के भविष्य निर्माण में बड़ा महत्त्व रखता है। गांधीजी के विचार आज पहले से अधिक प्रासंगिक है। इस तरह की पहल देश के सभी विश्वविद्यालयों को करनी चाहिए। क्योंकि यह ऐसा स्थान है, जो परिवर्तन के अवसर पैदा कर सकता है।

बिहार सर्वोदय मंडल के महामंत्री एवं 'सर्वोदय बुक स्टाल' के व्यवस्थापक चंद्रभूषण ने कहा कि आज गांधी-विचार के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता पहले से अधिक है। गांधी, विनोबा और जयप्रकाश नारायण के विचारों को गांव-गांव ले जाने की जरूरत है। इस कार्य के लिए 'सर्वोदय बुक स्टाल' एक माध्यम है।

उद्घाटन कार्यक्रम को कांति शर्मा, विजय कुमार, रामअवतार शर्मा, प्रमोद शर्मा, चितरंजन कुमार, रामनाथ ठाकुर आदि ने संबोधित किया। इस अवसर पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी की ओर से तारकेश्वर सिंह व अनूप नारायण आचार्य उपस्थित रहे। कार्यक्रम का संचालन सर्व सेवा संघ के पूर्व मंत्री विजय कुमार ने किया। **-स.ज. प्रतिनिधि**

टरबाइन-विज्ञान : अज्ञान या फरेब?

❑ अनिल सिन्हा

आक्सीजन, पानी और एनर्जी देने वाला प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का काल्पनिक टरबाइन विज्ञान सोशल मीडिया पर कई दिनों तक छाया रहा। देश और दुनिया में लोगों को यह मजाक काफी पसंद आया। मोदी जी भी इस पर बात करते वक्त काफी खुश लग रहे थे। कांग्रेस नेता राहुल गांधी को ज़रूर तकलीफ हुई कि प्रधानमंत्री के अज्ञान के बारे में बताने की हिम्मत उनके आस-पास के लोगों में नहीं है।

मोदी विज्ञान की अपनी जानकारी का परिचय कई बार और भी दे चुके हैं। नाले की गैस को ईंधन के रूप में इस्तेमाल कर चुके हैं और उस पर चाय बना चुके हैं। वह गणेश जी के हाथी के मस्तक को प्लास्टिक सर्जरी और महाभारत के योद्धा कर्ण का माता के गर्भ से जन्म नहीं लेने को टेस्ट ट्यूब विज्ञान बता चुके हैं। ऐसे ही विज्ञान का दर्शन मानव संसाधन मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक भी कराते रहे हैं।

क्या यह अज्ञान का मामला है? क्या उत्तराखंड के मुख्यमंत्री त्रिवेंद्र सिंह रावत पांचवीं कक्षा में पढ़ाए जाने वाले इस ज्ञान से नावाकिफ हैं कि कोई भी जानवर आक्सीजन लेकर कार्बन डाइआक्साइड छोड़ता है? उन्हें गाय आक्सीजन छोड़ती नजर आती है। क्या प्राचीन भारत में पुष्पक विमान के उड़ने से लेकर मिसाइल चलाने की क्षमता होने की कल्पना अज्ञान की उपज है? सच्चाई यह है कि ये कथाएं पहले से चलती रही हैं और हिंदुत्व की इतिहास-दृष्टि का हिस्सा हैं। इन सारी कथाओं का उद्देश्य प्राचीन भारत यानि हिंदू भारत की श्रेष्ठता दर्शाना है। लेकिन क्या बात श्रेष्ठता तक ही सीमित है?

ये कहानियां हिंदुत्व की राजनीति को सिर्फ सांप्रदायिकता का आधार ही नहीं देती हैं, बल्कि इसके आर्थिक एजेंडे को पूरा करने में मदद करती हैं। अंग्रेजों के समय में आरएसएस भी हिंदू महासभा तथा मुस्लिम लीग जैसे संगठन धार्मिक श्रेष्ठता की बात कर समाज को बांटते थे। इससे आगे बढ़कर वे आज़ादी के आंदोलन की पूरी विचारधारा और संघर्ष को नकारते थे। भारत के इतिहास को हिंदू युग, मुस्लिम युग और आधुनिक युग में बांटने का काम ब्रिटिश इतिहासकारों ने किया। उन्होंने ही हिंदू युग को श्रेष्ठ और मुसलमानों को हमलावर तथा भारत को पतन की ओर ले जाना वाला बताया।

तथ्य यह है कि मध्य युग में भी कई हिंदू राज्य थे और शासन करने के तरीके में हिंदू तथा मुस्लिम राजाओं में कोई फर्क नहीं था। उत्पादन की दृष्टि से भारत कभी पहले तो दूसरे नंबर पर होता था और एक निर्यात करने वाला देश था। साहित्य तथा संस्कृति के लिहाज से भी यह बड़ी ऊंचाई पर था। मध्ययुग में धार्मिक सुधार के क्रांतिकारी कार्य हुए तथा लोकभाषा में संतों और सूफियों ने कालजयी रचनाएं कीं। लेकिन देश की इन उपलब्धियों के बदले हिंदुत्व वादी प्राचीन भारत की उन उपलब्धियों के बारे में चर्चा करते रहे हैं, जो काल्पनिक हैं।

वैदिक विज्ञान के बहाने उन्हें मध्य युग ही नहीं, बल्कि प्राचीन भारत में बौद्ध दर्शन के प्रभाव में चिकित्सा तथा विज्ञान के दूसरे क्षेत्रों में हुई तरक्की को नकारने का मौका मिल जाता है। हिंदुत्व की लड़ाई सिर्फ मुसलमानों से नहीं है। यह बौद्ध तथा लोकायत चिंतन के भी खिलाफ है, क्योंकि ये दर्शन बराबरी तथा विभिन्नता के पक्षधर रहे हैं।

आज़ादी के आंदोलन के इतिहास को गौर से देखने पर पता चलता है कि उपनिवेशवादी शोषण के लिए हो रहे विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल के खिलाफ कांग्रेस के नेताओं और देशभक्त बुद्धिजीवियों ने अपनी पूरी ताकत लगाई थी। उन्होंने देश के परंपरागत ज्ञान-विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी को पुनर्जीवित करने की कोशिश करने के साथ आधुनिक विज्ञान को हासिल करने का भी काम किया।

आधुनिक विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी को अंग्रेजी सरकार के कब्जे से मुक्त करने के इस अभियान में बाल गंगाधर तिलक समेत कांग्रेस के तमाम नेता शामिल थे। तिलक ने स्वदेशी के तहत देशी उद्योग को आगे बढ़ाया, स्वदेशी कारखाने लगवाए तथा कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए सहकारी स्टोर खुलवाए। महात्मा गांधी ने तो स्वदेशी को स्वतंत्रता आंदोलन का प्रमुख कार्यक्रम ही बना दिया था। परंपरागत कारीगरी तथा आयुर्वेद, यूनानी जैसी चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा देना स्वदेशी अभियान का हिस्सा था।

देश के राष्ट्रवादी वैज्ञानिक, परंपरागत ज्ञान तथा टेक्नोलॉजी पर शोध के साथ-साथ इसे औद्योगिक विस्तार देने के काम में लगे थे। प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रफुल्ल चंद्र राय ने बंगाल केमिकल्स की स्थापना की थी, जिसमें आयुर्वेदिक दवाओं का आधुनिक तरीके से उत्पादन होता था।

लेकिन गांधी जी आयुर्वेद तथा यूनानी जैसी पद्धतियों को वैज्ञानिक कसौटियों पर जांचे बगैर अपनाने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने 1921 में दिल्ली के तिब्बिया कालेज की स्थापना के समारोह में वैद्यों तथा हकीमों को आधुनिक शोध का सहारा लेने की सलाह दी थी। एलोपैथी चिकित्सा पद्धति की अच्छी बातों को अपनाने तथा देशी चिकित्सा पद्धतियों को जड़ता से मुक्त कराने की सलाह वह हर दम देते रहते थे।

विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी के लिए ब्रिटेन पर निर्भरता खत्म करने के इस अभियान में प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. मेघनाद साहा ने तो तीस के दशक में अभियान ही छेड़ रखा था। इस अभियान को जवाहरलाल नेहरू का समर्थन हासिल था। डॉ. साहा की पहल के कारण 1937 में कांग्रेस अध्यक्ष सुभाषचंद्र बोस ने जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में राष्ट्रीय योजना समिति बनाई थी, जिसने देश में वैज्ञानिक विकास की रूपरेखा तैयार की थी।

परंपरागत हुनर को जीवित रखने तथा देश को आत्मनिर्भर बनाने में इसकी अहम भूमिका सुनिश्चित करने के लिए गांधी जी ने 1934 में आल इंडिया विलेज इंडस्ट्रीज एसोसिएशन की स्थापना की थी। इसके सलाहकार मंडल में जगदीशचंद्र बोस तथा सीवी रमन जैसे उच्च कोटि के वैज्ञानिक थे। नई तालीम के लिए वर्धा में आयोजित कांफ्रेंस ने डॉ. जाकिर हुसैन कमेटी बनाई थी। कमेटी ने 1938 में जारी अपनी रिपोर्ट में देशी कारीगरी के साथ आधुनिक विज्ञान की पढ़ाई की सिफारिश की थी।

अंग्रेजों के आने से पहले के भारतीय दर्शन तथा विज्ञान की स्थिति को लेकर भी स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान काफी शोध हुए और गणित, खगोलशास्त्र, ज्यामिति और बीजगणित के उत्कृष्ट ग्रंथों को खोज निकाला गया। भारत में विज्ञान के इतिहास पर गौर करने पर पता चलता है कि गणित, बीजगणित तथा खगोल शास्त्र में भारतीयों की दिलचस्पी वेद के समय से ही बनी थी और यह मध्ययुग तक

बनी रही। अंग्रेजों के आने के बाद भारत की कारीगरी तथा परंपरागत ज्ञान की प्रणाली खत्म-सी हो गई। नई शिक्षा पद्धति भी पश्चिमी ज्ञान के विस्तार के बदले सीमित शिक्षा और अंग्रेजी शासन के लिए क्लर्क पैदा करने की प्रणाली बन गई। महात्मा गांधी से लेकर रवींद्रनाथ टैगोर तक परंपरागत ज्ञान के संरक्षण व विकास में लगे थे। साथ ही, वे आधुनिक विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी के मामले में अंग्रेजों पर अपनी निर्भरता खत्म करने का काम कर रहे थे।

लेकिन हिंदुत्ववादी इस काम में मदद देने के बदले उस विज्ञान को प्रचारित करने में लगे थे, जो काल्पनिक था। उन्हें उस कारीगरी तथा ज्ञान से कुछ लेना-देना नहीं था, जिनके खत्म होने से जनता बेरोजगार हुई थी। उन्हें बंगाल के बुनकरों और बिहार में लोहा बनाने वाले उन कारीगरों से कोई लेना-देना नहीं था, जिन्हें अंग्रेजों ने रातोंरात भिखारी बना दिया था। ऐसे अनेक उद्योग नष्ट हो गए। गांधी जी खादी तथा स्वदेशी के जरिए अंग्रेजों की नीति से उजड़ गए लोगों की मुक्ति की कोशिश कर रहे थे।

लेकिन उपनिवेशवाद से सीधे संघर्ष में योगदान करने के बदले हिंदुत्ववादी विमान से लेकर प्लास्टिक सर्जरी की क्षमता का काल्पनिक दावा कर रहे थे। इस काम में सबसे आगे आर्य समाज था, जो वेदों में सारा ज्ञान होने का दावा करता था। यह एक स्तर पर सांप्रदायिकता फैला रहा था और दूसरे स्तर पर अंग्रेजों के खिलाफ आर्थिक लड़ाई को कमजोर कर रहा था। वेदों में विमान के ज्ञान के प्रचार से अंग्रेजों का क्या बिगड़ने वाला था? जब देश स्वदेशी और विदेशी वस्तुओं के बायकॉट की ओर बढ़ रहा था, तो हिंदू महासभा नेता महामना मदन मोहन मालवीय अंग्रेजी सरकार की ओर से बनाए गए इंडस्ट्रियल कमीशन के सदस्य थे और उनके फायदे वाली नीतियों के लिए काम कर रहे थे। तीस के दशक में जब स्वदेशी आंदोलन अपनी जड़ें गहरी कर रहा था तो हिंदू महासभा के सैनिक अंग्रेज सरकार को सहयोग कर रहे थे और हिंदुओं को काल्पनिक विज्ञान पढ़ा रहे थे। सैकड़ों साल की उस भारतीय कारीगरी से उनका कोई लेना-देना नहीं था, जिसने एक समय दुनिया में अपना सिक्का जमा रखा था।

प्रधानमंत्री मोदी का काल्पनिक वैदिक विज्ञान पर जोर देना या टरबाइन से आक्सीजन, पानी तथा बिजली बनाने की बात करना ऊपरी तौर पर अज्ञान का मामला दिखता है, लेकिन ऐसा नहीं है। यह हिंदुत्व की उसी विचारधारा का अगला भाग है, जो आजादी के पहले अंग्रेजों का हित साधती था और आज विदेशी पूंजीपतियों की मदद करती है।

मोदी के शासनकाल में देश की उन तमाम शोध संस्थाओं की आर्थिक सहायता कम कर दी गई है, जो विश्व-स्तर का शोध कार्य कर रही थीं। यही नहीं रेलवे, रक्षा, टेलीफोन समेत अनेक उद्योगों में चल रहे शोध लगभग ठप कर दिए गए हैं, ताकि विदेशी तकनीक लाई जा सके। देशी पूंजीपतियों को शोध करने में कोई रुचि नहीं है। वह विदेशी तकनीक के सरल मार्ग पर चल कर अपनी कमाई में लगा है। कोरोना काल में यह ज्यादा साफ तौर पर दिखाई दे रहा है। कोविड की दवाई तथा इसकी वैक्सीन बनाने की कोई सरकारी पहल करने के बजाय मोदी ने थाली बजाने और दीया जलाने का कार्यक्रम किया और हिंदुत्व के प्रचार-तंत्र ने इसे वैज्ञानिक सिद्ध किया। देश की जान-माल से खिलवाड़ के ऐसे उदाहरण कम ही मिलते हैं।

विज्ञान तथा तकनीक की जनविरोधी नीतियों को ढकने का इससे अच्छा उपाय क्या हो सकता है कि लोगों को काल्पनिक तथा हंसी पैदा करने वाले विज्ञान में उलझाए रखा जाए? मोदी और भाजपा का विज्ञान अज्ञान नहीं, फरेब है। **–जनचौक**

दक्षिण अफ्रीका : रंगभेद विरोधी संघर्ष

भवानीदयालजी की आत्मकथा का परिचय

महात्मा गांधी की आत्मकथा में जयराम सिंह का उल्लेख आता है, जो दक्षिण अफ्रीका के नाताल में भारतीयों के नेता थे। उनके पुत्र थे भवानीदयाल। प्रवासी की आत्मकथा नाम से इनकी आत्मकथा प्रकाशित हुई है। जयरामजी गिरमिटिया मजदूर थे और 1881 में बिहार से नाताल पहुंचे। भवानीदयाल जी का जन्म जोहांसबर्ग में ही हुआ। इस किताब का संपादन डॉ. मंगलमूर्ति ने किया है। इस किताब का मूल संस्करण सन् 1947 में प्रकाशित हुआ था, जिसमें डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी की छोटी-सी प्रस्तावना है। दक्षिण अफ्रीका की भारतीय मजदूरों की सामाजिक स्थिति से हमें यह किताब परिचित कराती है। वहां जन्मे भारतीय बच्चों को मातृभाषा हिन्दी नहीं आती थी। भवानीदयाल जी ने वहां हिन्दी सिखाने के लिए स्कूल स्थापन किये। हिन्दी प्राचारिणी सभा की स्थापना की। 'हिन्दी' साप्ताहिक निकाला। भवानीदयाल जी आर्यसमाजी थे। उन्होंने हिन्दू वैदिक धर्म का प्रचार न केवल दक्षिण अफ्रीका में बल्कि सभी ब्रिटिश कॉलोनियों में किया।

वे तथा उनकी पत्नी महात्मा गांधी द्वारा 1913 में किये गये सत्याग्रह में जेल गये थे। रंगभेद के खिलाफ लड़ाई में वे जीवन के अंत तक डटे रहे। वे नाताल इंडियन कांग्रेस के नेता थे। प्रवासी भारतीयों के अन्याय के खिलाफ अफ्रीकन इंडियन कांग्रेस के झंडे तले उन्होंने जो संघर्ष किया, उसका विस्तृत चित्रण आत्मकथा में है। गांधीजी सन् 1915 में लौटकर भारत आये। उसके बाद 1947 तक के संघर्ष का इतिहास विस्तार से आत्मकथा में दिया गया है। गांधीजी ने केवल भारतीयों पर हो रहे अन्याय के विरोध में संघर्ष किया, उन्होंने काले लोगों को इस लड़ाई में शामिल नहीं किया और न ही उनके लिए संघर्ष किया, यह आरोप गांधी पर लगाया जाता है। इसका जवाब इस आत्मकथा में दिया गया है। नाताल इंडियन कांग्रेस में जो राजनीति हुई, उसके परिणामस्वरूप प्रवासी भारतीयों पर जो गाज गिरी, उससे उबकर 1941 में वे मातृभूमि भारत लौट आये। भारत में उन्होंने बिहार व अजमेर में प्रवासी भवन बनाये। नाताल में भी प्रवासी भवन बनाया था। वे दक्षिण अफ्रीका कांग्रेस व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बीच की कड़ी थे।

यह किताब हमें दृष्टि देती है कि ब्रिटिश कॉलोनियों में जहां-जहां प्रवासी मजदूर गये, उनका इतिहास, उनसे संबंधित किताबें हमें पढ़नी चाहिए। दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह व गांधी को समझने के लिए यह किताब निश्चित ही उपयुक्त है। उसी तरह विश्व में फैले प्रवासी भारतीयों में आर्य समाज ने जो कार्य किया है, वह भी समझना जरूरी है।

जोहांसबर्ग की सोने की खदानों में भवानीदयाल जी ने मजदूरी की थी। उन खदानों की व उनके काम की जानकारी भी उन्होंने दी है। परिशिष्ट में भवानीदयाल जी की लिखी किताबों की सूची दी गयी है। उन्होंने 15 किताबें लिखी हैं। उसमें से आठ किताबें दक्षिण अफ्रीका से संबंधित हैं। इन किताबों को पढ़ने की प्रेरणा भी हमें यह आत्मकथा देती है।

भवानीदयाल जी 1941 में भारत लौटने के बाद अजमेर में प्रवासी भवन बनाकर रहने लगे। वहीं सन् 1951 में उनकी मृत्यु हुई। भवानीदयाल जी दक्षिण अफ्रीका व विश्व के अन्य देशों में फैले भारतीय प्रवासी मजदूरों के 'ज्ञानकोष' थे। भवानीदयालजी की आत्मकथा 1915 से 1947 तक के दक्षिण अफ्रीकी के रंगभेद विरोधी संघर्ष का इतिहास है। 'सत्याग्रही महात्मा गांधी' शीर्षक अध्याय में गांधीजी का चरित्र भी उन्होंने लिखा है। भवानीदयाल जी ने बचपन से ही गांधीजी को देखा था। उनके कंधे से कंधा मिलाकर सत्याग्रह किया था। इसलिए उनका लिखा यह चरित्र आपको अनूठा लग सकता है। **-जयंत दिवाण**

लोकतंत्र बहुमत की रंगदारी से नहीं चलता

❑ श्रीनिवास

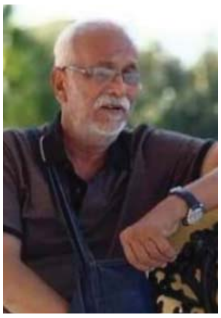

सरकार अपने फैसलों व व्यवहार से लगातार यह संदेश दे रही है कि उसे संविधान और लोकतांत्रिक मर्यादाओं की रत्ती भर परवाह नहीं है. बीते दिनों राज्यसभा में अल्पमत में रहने और विपक्ष की आपत्तियों व विरोध के बावजूद जिस तरह 'ध्वनि मत' से नये कृषि विधेयकों को पारित किया गया, वह भी इसका एक उदाहरण है.

फिर लगभग विपक्षविहीन सदन में अनेक विधेयक 'पारित' कर लिये गये. ठीक उसी तरह जैसे इमरजेंसी में बहुतेरे विपक्षी सांसदों के जेल में रहते कांग्रेस सरकार ने किया था. हालांकि बाद में जनता पार्टी सरकार के समय उनमें से अधिकतर आपत्तिजनक संविधान संशोधनों को रद्द भी किया गया था.

फिर नये कृषि कानूनों को किसानों के हित में बताते हुए सत्ता पक्ष ने इनके विरोधियों को ही किसान विरोधी करार नहीं दिया, बल्कि विरोध में सड़क पर उतरे किसानों को भी 'मुट्ठी भर' बड़े किसान व बिचौलिये बता दिया. जब यह बात समझ में आ गयी कि ये 'मुट्ठी भर' नहीं हैं, तो गत 14 अक्टूबर को किसान संगठनों को वार्ता का न्योता भी दे दिया. मगर जब बैठक में पहुंचे किसान नेताओं को पता चला कि उनसे वार्ता करने के लिए कृषि मंत्री नहीं, एक अधिकारी आया है, तो वे भड़क गये. बैठक का बहिष्कार कर दिया. जाहिर है, ये किसान किसी के बहकावे में सड़क पर नहीं आये हैं. उनका गुस्सा सरकार पर भारी पड़ सकता है.

इसी तरह श्रम कानूनों में भी मनमाने बदलाव किये गये, जो प्रबंधन व मालिकों के पक्ष में जाते हैं. उसके पहले मजदूर संगठनों से गंभीरता व ईमानदारी से बातचीत भी नहीं की गयी. सबसे ताजा उदाहरण विगत आठ अक्तूबर को एनआईए द्वारा रांची (झारखंड) में 83 वर्ष के एक बुजुर्ग सामाजिक कार्यकर्ता स्टेन स्वामी की गिरफ्तारी है. उन पर लगाये गये आरोपों की बात फिलहाल छोड़ दें, सवाल है कि देर शाम आठ बजे एक बीमार बुजुर्ग को पूछताछ के बहाने ले जाने का क्या औचित्य था? क्या वे किसी लूट या अन्य हिंसक घटना को अंजाम देने या भागने की तैयारी कर रहे थे? फिर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया, मगर अगले दिन रांची की एनआईए अदालत में पेश करने के बजाय मुंबई ले जाया गया, जहां बीमार स्टेन को सुविधाविहीन अस्पताल में भर्ती कर दिया गया. इतनी संवेदनहीनता!! कोई संदेह नहीं कि सरकार के विरोधियों/आलोचकों को परेशान करने, उनको औकात बताने के लिए सीबीआई, एनआईए और ईडी जैसी एजेंसियों और नारकोटिक्स नियंत्रण ब्यूरो तक का जैसा बेशर्म इस्तेमाल अभी हो रहा है, वह अभूतपूर्व है!

लोकतंत्र बहुमत की रंगदारी या गुंडागर्दी से नहीं चलता. जब बहुमत किसी कीमत पर अपनी बात थोपने पर आमादा हो जाये, तब लोकतंत्र कमजोर होता है. विकृत होता है. भारत में हम इसका भयावह रूप इमरजेंसी के दौर में देख चुके हैं. ऐसा लगने लगा है, मानो बिना किसी घोषणा के उसी दौर की वापसी हो रही है.

वर्तमान सरकार को तो सही मायनों में 'बहुमत' का समर्थन भी हासिल नहीं है. हम जानते है कि वर्तमान चुनाव प्रणाली में वास्तविक बहुमत के बिना भी किसी दल या गंठजोड़ को विधायिका में बहुमत मिल सकता है. एक चुनाव क्षेत्र में अनेक प्रत्याशी होने पर बहुत कम मत पाकर भी कोई विधायक या सांसद बन सकता है. इसी आधार पर सरकारें बनती भी रही हैं. पर वर्तमान सरकार को तो मात्र 34 फीसद मतदाताओं का समर्थन हासिल है. लेकिन उसके समर्थक और मुरीद राजनीतिक पंडित भी इसे 'प्रचंड जनादेश' वाली सरकार बताते हैं.

वैसे यह कोई विशेष चिंता की बात नहीं है. सत्ता का मद तो होता ही है. मगर यह महज बहुमतवाद नहीं है. इसके पीछे बहुसंख्यकवाद का घातक उन्माद है, जो देश की बहुलता को रौंदने पर आमादा है. राजनीतिक बहुमत तो परिवर्तनशील होता है. मगर धार्मिक ध्रुवीकरण और धार्मिक आधार पर बना बहुमत स्थायी हो जाता है, जो लोकतंत्र की मान्यता के ही विरुद्ध है. सरकार की तमाम विफलताओं और ज्यादतियों के बावजूद देश में हिन्दू समाज का अल्पसंख्यक, मगर मुखर और सबल तबका सरकार के समर्थन में और आक्रामक अंदाज में नजर आ रहा है, वह एक अनिष्टकारी भविष्य का संकेत है.

सीएए, एनपीआर और एनआरसी के मुद्दे पर सरकार और उसके उग्र समर्थकों के रवैये में भी यह दिखा था. उन काले कानूनों के विरोध में हुए आंदोलन को दबाने और बदनाम करने के लिए दिल्ली में हुई नियोजित हिंसा की जांच और कार्रवाई के नाम पर दिल्ली पुलिस ने जो एकतरफा रवैया दिखाया, उसका सच भी अब सामने आ रहा है. वह दौर फिलहाल स्थगित है, कोरोना से निजात मिलते ही पुनः शुरू होगा. भाजपा से असहमत लोगों, उसके आलोचकों और एक ख़ास तबके के लिए वह निश्चय ही दहशत और खौफ का दौर होगा.

आज जो हो रहा है और जो होने वाला है, इसे राजनीतिक विश्लेषक विजय कुमार दुबे ने अपने लेख 'बहुसंख्यकवादी राष्ट्र बनने जा रहा है भारत' में सटीक ढंग से रखा है- '...लोकतंत्र के केंद्र में पुलिस, फौज, अर्द्धसैनिक बलों और सरकार के आज्ञापालन का विचार स्थापित करने की प्रक्रिया जोर पकड़ रही है. प्रतिरोध, व्यवस्था-विरोध और असहमति के विचार लगभग अवैध घोषित कर दिये गये हैं. एक नया भारत बन रहा है, जिसमें उस भारत की आहट भी नहीं है, जिसे गांधी-नेहरू की कल्पनाशीलता ने बनाना शुरू किया था...' हम उम्मीद करें कि यह भविष्यवाणी गलत सिद्ध हो.

निश्चय ही भारत आम्बेडकर, गांधी, नेहरू और पटेल आदि राष्ट्रीय नेताओं के सपनों से उलट देश बनने की दिशा में अग्रसर दिख रहा है. तो क्या ये आसुरी शक्तियां सफल हो जायेंगी? इनकी कोशिशों का शांतिपूर्ण प्रतिकार करना तो हर विवेकवान नागरिक का कर्तव्य है. मगर अंततः तो यह देश के बहुसंख्यक समुदाय को ही तय करना है कि क्या इस तरह का विभाजित भारत, जिसके नागरिक धर्म और जाति के नाम पर एक दूसरे के शत्रु की तरह आमने सामने होंगे, बनाना ही उनका लक्ष्य है, क्या ऐसे ही यह महान देश विश्व गुरु बनेगा?

इस खतरे के प्रति डॉ बाबा साहेब आम्बेडकर ने भी बहुत पहले आगाह कर दिया था कि यदि राजनीतिक बहुमत की जगह धार्मिक बहुमत ले लेगा, तो वह लोकतंत्र नहीं होगा. उन्होंने कहा था, '...अगर हिन्दू राज हक़ीक़त बनता है तो यह इस देश के लिए सबसे बड़ी तबाही का दिन होगा.' वह तबाही कब तक टाली जा सकेगी, हमारे सामने यह बड़ी चुनौती है. ❑

सत्याग्रह की जन्मभूमि-चम्पारण

❑ डॉ. रश्मि झा

भारत की आजादी की लड़ाई में मोहनदास करमचंद गाँधी ने सत्याग्रह का सर्वप्रथम प्रयोग चंपारण की भूमि पर किया, जो सफल रहा। गाँधी जी के अनुसार, सभी प्रकार के मानव कष्टों को दूर करने के लिए सत्याग्रह सर्वोत्तम औषधि है। सत्याग्रह के उचित प्रयोग के लिए वे आत्मबल को आवश्यक बताते हैं, जिसकी प्राप्ति सत्य, अहिंसा, सेवा, त्याग एवं आत्मशुद्धि पर आधारित है। गाँधी जी ने सत्याग्रह के सिद्धांतों के आधार पर कार्य करके चंपारण के किसानों का कष्ट दूर किया था। इस क्षेत्र के लोगों ने, उनके अहिंसक आंदोलन के सही होने के प्रति अपनी नैतिक आस्था भर दी। यहीं गाँधी जी को महात्मा की उपाधि मिली। इसके बाद ही स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व गाँधी जी को सौंपा गया। गाँधी जी ने अखिल भारतीय कांग्रेस के माध्यम से, विशाल रूप से सत्याग्रह का प्रयोग कर अंग्रेजी शासकों को भारत छोड़कर जाने को मजबूर किया।

1775 के बाद यूरोपीय बाजारों में नील की बढ़ती माँग ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी का ध्यान नील के उत्पादन और तिजारत की ओर आकृष्ट किया। इस समय नील का व्यापार सर्वाधिक मुनाफा देने वाला व्यवसाय था। नील की अप्रत्याशित माँग को पूरा करने के लिए बंगाल तथा बिहार में नील की कई कोठियां स्थापित की गयीं। 1803 ईसवी तक तीरहुत जिले में नील की लगभग 25 फैक्ट्रियां थी।

गाँधी का चंपारण आगमन वहां के किसानों पर होने वाले, नीलहे गोरों की जोरजुल्म की कहानी थी। अंग्रेज लोग करीब 100 साल से इस इलाके में नील की खेती किया करते थे। मिथिला के अनेक स्थानों पर उनकी कोठियां थीं। एक कोठी के कार्य क्षेत्र के भीतर कई ग्राम पड़ते थे। उन गांवों के रहने वाले चाहे वह जमींदार हो या किसान, उस क्षेत्र के कोठी वाले अंग्रेज के टिनेंट कहे जाते थे और उनके ऊपर उस नील कोठी के स्वामी का प्रभुत्व माना जाता था। कोठी वाले अंग्रेज प्रायः जमींदारों से रैयती जमीनों का ठेका लिखा लेते थे। इसके अतिरिक्त जमींदारों एवं रैयतों को अपने अधिकार की जमीन से प्रति बीघा 3 कट्ठा निकालकर उसमें नील की खेती करनी पड़ती थी, इस प्रथा को तिनकठिया कहा जाता था। किसानों को बढ़िया से बढ़िया एवं उपजाऊ खेतों में से ही नील की खेती हेतु प्रति बीघा 3 कट्ठा के हिसाब से जमीन सुरक्षित रखनी पड़ती थी। खेत की जुताई-कुड़ाई बढ़िया नहीं होने पर अंग्रेज, किसानों के साथ डांट-फटकार करते तथा जुर्माना लगाकर उनसे रुपया हर्जाना के रूप में वसूल करते थे। कभी-कभी दंड भी देते थे। अंग्रेज नील की खेती के लिए अपनी इच्छा के अनुसार एक छोटी सी रकम प्रति बीघा के हिसाब से किसानों को उपकार के रूप में देते थे।

इस संबंध में भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने अपनी आत्मकथा 'सत्याग्रह इन चंपारण' में लिखा है कि किसी भी रैयत को हिम्मत नहीं होती थी कि वे नील बोने से इंकार करें। अगर कोई हिम्मत करता तो उस पर हजार तरह के जुल्म करके उस को नील बोने के लिए मजबूर कर दिया जाता था। उनके घर और खेत लूट लिए जाते थे, खेत जानवरों से चरा दिए जाते, जुर्माना वसूल किया जाता तथा शारीरिक शोषण भी किया जाता था। इस डर के मारे प्रायः सभी रैयत बीघा पीछे 3 कट्ठा नील बो दिया करते। उनके खेतों में जो सबसे बेहतर खेत होते, नीलहे उन्हीं को चुनकर नील बोने के लिए कहते थे। जब नील तैयार हो जाता, तब उसे काटकर कोठी पर पहुंचा देना होता था।

चंपारण के जिन हिस्सों में नील की खेती नहीं होती थी, वहां गैरकानूनी ढंग से किसानों पर लगान बढ़ाया जाता था। उनसे नगद रुपए वसूल किए जाते थे। सरकारी अफसर भी जनता के शोषण में नीलवरों की पूर्णरूपेण मदद करते थे।

उत्तर बिहार में दो तरीके से नील की खेती होती थी - जीरात तथा आसामीवार। जीरात के अंतर्गत अंग्रेज़ सीधे अपनी देखरेख में अपने हल बैल की सहायता से नील की खेती कराते थे। इसके लिए वे अनेक रैयतों को नियुक्त करते थे और उनके हल बैल को अपने लिए सुरक्षित कर लेते थे। ऐसे रैयतों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। इनकी दशा हमेशा दयनीय बनी रहती थी। आसामीवार व्यवस्था में कोठी वाले साहब रैयतों के द्वारा उन्हीं के खेतों में नील की खेती कराते थे। इसके अंतर्गत सबसे प्रचलित तरीका तिनकठिया था। रैयतों का शोषण अनेक तरीकों से होता था। किसानों के खेत में नील उपजाने के लिए अनेक तरह की धमकी देना, जबरदस्ती बहुत कम मजदूरी देना और कभी-कभी बिना मजदूरी पर ही काम कराना आदि अंग्रेजों की आदत में शामिल था। किसी कारण से अगर नील नहीं उपजा सके तो उसके लिए भारी जुर्माना लगाया जाता था।इस अत्याचारी एवं कठोर प्रथा की यही विशेषताएं थीं। जब किसान इसके विरुद्ध आवाज उठाते या सुरक्षा की मांग करते तो निलहे साहब बड़ी कठोरता से उसे दबा देते थे।

सरकार पर दबाव डालकर अंग्रेजों ने ऐसे कानून पास करा लिए थे, जिसके अनुसार जमींदार रैयत को मनमानी फसल बोने पर मजबूर कर सकता था और अगर कोई रैयत इससे छूट पाने की कोशिश करता तो उस पर मनमाना लगान बढ़ा दिया जाता था। इस तरह किसान, नीली आग में धू-धू कर जल रहे थे और किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि इस तरह के अत्याचारों से निर्धन और निरीह किसानों की रक्षा कर सके। बेबस किसान अपनी मुक्ति के लिए छटपटा रहे थे और ईश्वर से गुहार लगा रहे थे। ऐसे समय में प्रेस ने किसानों का पक्ष लिया। चंपारण के किसानों की दुरावस्था की ओर बिहार, बंगाल, संथाल

आवश्यक सूचना

सर्व सेवा संघ की नयी वेबसाइट https://SARVASEVASANGH.IN पर संस्था से संबंधित सभी जानकारियां प्रदर्शित हैं। कृपया आप नई वेबसाइट का उपयोग करें।

परगना और नागपुर के अखबारों का ध्यान आकृष्ट हुआ।

मिथिला के जन-प्रतिनिधियों ने चंपारण के रैयतों की इस दर्दनाक स्थिति को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मंच पर उठाने का निर्णय लिया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन (दिसंबर 1916) में बिहार के प्रतिनिधि भाग लेने लखनऊ गए, जिनमें मिथिला के बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद के साथ लक्ष्मण प्रसाद, भुवनेश्वर मिश्र, कमलेश्वरी चरण सिन्हा और राम बहादुर प्रसाद गुप्त थे। इस अधिवेशन में दो तरह के प्रस्ताव पेश किए जाने वाले थे, जिसमें से एक चंपारण के नीलहे साहब एवं उनके रैयतो के संबंध के बीच का था। राजकुमार शुक्ला, जिन्हें नीलहों के अत्याचारों का व्यक्तिगत कटु अनुभव था, चंपारण के किसानों के प्रतिनिधि के रूप में लखनऊ कांग्रेस में भाग लेने गए थे। नील संबंधी प्रस्ताव पर विषय-निर्वाचन समिति में वक्ताओं का चुनाव करते समय बिहार के प्रतिनिधियों ने गांधी से बोलने का आग्रह किया, किंतु गांधी इसके लिए सहमत नहीं हुए। उन्होंने कहा कि जब-तक मैं स्वयं ही स्थिति का निरीक्षण न कर लूँ,मै कुछ राय नहीं दे सकता। अतः आप ही प्रस्ताव प्रस्तुत करें, तत्काल के लिए मुझे स्वतंत्र छोड़ दें। कांग्रेस अधिवेशन के दूसरे दिन बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद ने निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किया - 'यह कांग्रेस सरकार से उत्तर बिहार में यूरोपीय कोठी वालों एवं रैयतों के बीच तनावपूर्ण संबंधों और कृषि समस्याओं के कारणों की जांच तथा उन्हें दूर करने के उपायों की अनुशंसा करने हेतु अधिकारियों तथा गैर सरकारी सदस्यों की एक संयुक्त समिति नियुक्त करने का अनुरोध करती है'।

कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित कर दिया।तब बिहार के प्रतिनिधियों ने गांधीजी से चंपारण आने का अनुरोध किया। विशेषकर राजकुमार शुक्ला ने उनसे स्वयं चंपारण आने तथा वहां के रैयतों की दयनीय अवस्था देखने पर ज़ोर दिया। गांधी ने चंपारण आने की हामी भरी। राजकुमार शुक्ला उनके साथ कानपुर तक गए। वहां बिहार के कुछ नेताओं के साथ पुनः उनसे मिले तथा गांधी के आश्वासन देने पर ही लौटे। उन्होंने बिहार लौट कर गांधीजी से पत्राचार किया। यह तय हुआ कि राजकुमार शुक्ला कोलकाता कांग्रेस के समय गांधी जी से मिलें। गांधीजी के शब्दों में, 'श्री शुक्ल, बिहार के हजारों लोगों पर से नील के कलंक को धो देने के लिए कृत संकल्प थे'।

9 अप्रैल 1917 को राजकुमार शुक्ल के साथ गांधीजी कोलकाता से चले। अगले दिन पटना पहुंचे और उसी रात मुजफ्फरपुर पहुंचे। वहां से 15 अप्रैल को वे मोतीहारी पहुंचे। उनके साथ राजेंद्र प्रसाद, रामनवमी प्रसाद, धरणीधर प्रसाद, राम विनोद सिंह, अनुग्रह नारायण सिंह, ध्वजाप्रसाद साहू तथा जेबी कृपलानी आए थे। ब्रजकिशोर प्रसाद की विनम्रता, सरलता, सद्भावना तथा अटूट आस्था से गांधीजी अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्हें लगा मानो इन लोगों के साथ जन्म-जन्म की मित्रता के बंधन में बंध गए हों। अपने साथियों सहित ब्रजकिशोर प्रसाद तथा अन्य लोगों ने गांधीजी को कार्य में हर संभव सहयोग करने का वचन दिया। चंपारण पहुंच कर गांधी ने किसानों की समस्याओं का अध्ययन शुरू किया।बाबू धरणीधर अनुवादक के रूप में तथा रामनवमी प्रसाद दुभाषिये के रूप में गांधी के साथ हो लिए। गांधी ने गांव वालों से खुलकर बातचीत की तथा अपनी आंखों से सारी स्थिति को देखकर कहा कि जब तक भारत के गांव की दशा में सुधार नहीं होगा, तब तक सच्चा स्वराज नहीं आ सकता। अंग्रेजी सरकार नहीं चाहती थी कि गांधी पीड़ित किसानों की कठिनाइयों की जांच करें। अतः चंपारण के जिला दंडाधिकारी ने उनके गांव में प्रवेश को रोकने के लिए निषेधाज्ञा की घोषणा की, किंतु गांधी ने धारा 144 के लागू रहते हुए भी वस्तु स्थिति को स्वयं जाकर देखने के अपने अधिकार पर जोर दिया। प्रशासन ने गांधी पर प्रतिबंध लगाया एवं गिरफ्तार कर के मुकद्दमा चलाने का प्रयत्न किया लेकिन गांधी के अहिंसक आंदोलन को व्यापक जन समर्थन प्राप्त था। जिस समय गांधी ने अदालत के कमरे में प्रवेश किया, उस समय 2000 लोग उनके पीछे पीछे आ रहे थे। 18 अप्रैल 1917 को चंपारण के दंडाधिकारी के समक्ष गांधी ने बयान दिया कि 'जिन परिस्थितियों में मैं अभी हूं, उनमें एकमात्र यही रास्ता है कि आदेश का उल्लंघन करने की सजा बिना किसी प्रतिरोध के मैं स्वीकार कर लूं'। गांधी के इस निर्भय और स्पष्ट वक्तव्य पर मजिस्ट्रेट ने उन्हें रिहा कर दिया। इस तरह सरकार कोई अनुचित कार्यवाही नहीं कर पाई।

अंततः प्रशासन को झुकना पड़ा। तदुपरांत बिहार के उपराज्यपाल एडवर्ट अल्बर्ट गेट ने गांधी को रांची बुलाया तथा एक जांच समिति बनाने की इच्छा जाहिर की। उन्होंने गांधी से आग्रह किया कि वह भी समिति के सदस्य बनें। गांधी ने इस शर्त पर सदस्यता स्वीकार की कि वे अपने सहकर्मियों से सलाह मशविरा करने को स्वतंत्र होंगे।समिति के सदस्य होते हुए भी रैयतों की वकालत करेंगे तथा जांच संतोषजनक नहीं होने पर रैयतों का पथ प्रदर्शन करने को स्वतंत्र होंगे। यह जांच समिति 'चंपारण एग्रेरियन कमेटी' कहलाई।

अक्टूबर 1917 को समिति ने सर्वसम्मति से एक रिपोर्ट पर अंतिम सहमति दे दी और अगले दिन उसे बिहार सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। सरकार ने प्रायः सभी अनुशंसाएं स्वीकार कर लीं। 18 अक्टूबर 1917 को इस आशय की अधिसूचना प्रकाशित कर दी गई।एक कानून बनाकर तिनकठिया प्रथा का अंत कर दिया गया, सभी रैयतों का लगान भी घटा दिया गया तथा किसानों को क्षतिपूर्ति की रकम दी गयी।

चंपारण सत्याग्रह भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ। इसके बाद गांधी के सत्याग्रह आंदोलनों की श्रृंखला सी चल पड़ी। जहां तक चंपारण की रैयतों का संबंध था, तो गांधी के प्रयास से उन्हें एक अन्यायपूर्ण व अत्याचारी व्यवस्था से छुटकारा मिला। इसका उनके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनमें एक नई जागृति तथा जुल्म के खिलाफ लड़ने की हिम्मत पैदा हुई। आगामी दशकों में स्वतंत्रता संघर्ष के दरम्यान जो अग्नि परीक्षा उन्हें देनी थी, उसकी भूमिका प्रस्तुत हुई। ❑

इस अंक के आवरण पृष्ठ पर प्रकाशित विचार हफ़ीज किदवई के हैं। हफ़ीज किदवई लखनऊ में रहते हैं और एक खुदाई खिदमतगार हैं। - सं.

बिहार चुनाव 2020ः धर्म पर भूख भारी

❑ मो. मंसूर आलम

मुझे याद है, जब अफ़गानिस्तान तालिबान से मुक्त हुआ तो अफ़गान के सैलून रात भर अपना कारोबार कर रहे थे. नौजवान अपनी दाढ़ियाँ कटाने के लिए लाइन से लगे थे. तालिबान ने जहाँ कुछ अच्छे काम किए थे, वहां उसका सबसे ख़राब काम बामियान की बुद्ध मूर्ति को ढहा देना था. तालिबान ने अफीम के नशे में जकड़े अफगानिस्तान को अफीम मुक्त किया था, जिसकी रिपोर्टिंग बहुत बाद में बीबीसी लन्दन ने की थी, लेकिन उसने नाज़ी प्रथा को ही वहां स्थापित किया था. अफ़गानिस्तान में तालिबान की हुकूमत के कारण मलाला मिलीं. अफ़गानिस्तान अपने देश में 20वीं सदी में कोई नोबेल विजेता की कल्पना नहीं कर सकता था.

मोदी सरकार की तुलना अफ़गानिस्तान की तालिबानी हुकूमत से नहीं की जा सकती. ऐसा इसलिए भी नहीं हो सकता क्योंकि मोदी सरकार तमाम ख़राबियों के बावजूद लोकतान्त्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार है. मोदी हुकूमत की तुलना पेशवाई राज से करना मुझे सटीक लगता है. पेशवाओं की हुकूमत के खिलाफ जाकर महाराष्ट्र के दलितों ने अंग्रेजों से मिलकर पेशवाई शासन को अपने पैरों तले कुचला था. उसी लड़ाई को हम कोरेगांव की लड़ाई कहते है. बाबासाहेब आंबेडकर को भी उस लड़ाई पर गर्व था और पूरे देश के दलित उस लड़ाई को दलितों के शौर्य संघर्ष के रूप में मनाते हैं. मोदी सरकार की तुलना पेशवाई राज से इस संदर्भ में भी सटीक बैठती है क्योंकि वहां शौर्य दिवस हमेशा से शान्तिपूर्वक मनाया जा रहा है, लेकिन मोदी सरकार के 4 साल बाद ही पहली बार वह हिंसक हो गया. आज भी उस हिंसा के नाम पर किसी को भी बिना कहे एनआईए उठा लेती है. झारखंड के फ़ादर स्टेन स्वामी उस हिंसा के ताज़ा पीड़ित हैं.

2014 के बाद मोदी सरकार ने पूरे देश की प्राथमिकताएं ही बदल दीं. जो लोग कांग्रेस राज में भ्रष्टाचार, महंगाई, पेट्रोल की बढ़ती कीमतों और रुपए के अवमूल्यन आदि पर बात कर रहे थे, वे अचनाक से मुसलमान, दलित, राम, अल्लाह करने लगे.

नोटबंदी को मोदी ने विपक्ष के लाख हंगामे के बावजूद शुरूआती दिनों में राष्ट्रीय उत्सव बना दिया. सब लोग सीना तान कर कर्मठ भारतीय फौजी की तरह बैंक से 2 हजार निकालने में लगे रहे. 100 से ज्यादा मौतों के बाद भी उफ़ तक नहीं की. लोगों के मन में यह बात बैठा दी गयी कि इससे नुकसान देश का नहीं, बल्कि देश के बेईमानों का है. लेकिन जब इसका असर गरीब औरतों के गुल्लक पर हुआ, तब लोगों को पता चला कि बैंक में नहीं डाला गया सब धन काला नहीं होता. कुछ उससे भी अधिक सफ़ेद होता है क्योंकि वहां गाढ़ी कमाई की जमा पूँजी होती है. इसका असर गाँवों में खूब हुआ, अलबत्ता मीडिया ने इस पर चुप्पी साध रखी. मीडिया का शहरीकरण यहाँ घातक दिखा. इसके बाद जीएसटी के गलत कार्यान्वयन ने पूरे देश के व्यापारियों को जंजाल में डाल दिया. व्यापार ठप हो गया. कारोबारियों का लगातार आक्रोश सडकों पर दिखा. लेकिन कुछ को छोड़कर मीडिया इससे अनजान ही बनी रही.

मोदी सरकार ने अपने बेतुके निर्णयों से हुई देश की बदहाली को हिंदुत्व के गमछे से ढकने का प्रयास किया. उदाहरण के लिए, नोटबंदी के असर को कम करने के लिए तीन तलाक का बिल लाना, पुलवामा आतंकी हमले के बाद कश्मीर से 370 का हटाना, विदेश नीति की विफलता को ढंकने के लिए सीएए और एनआरसी लागू करने की बात करना, कोरोना की ग़ैर ज़िम्मेदारी को बेअसर करने के लिए कोरोना काल में ही राम मन्दिर का शिलान्यास करना, ऐसे कुछ ठोस प्रमाण हैं जो बताते हैं कि मोदी सरकार ने अपनी विफलताओं को छिपाने के लिए हिंदुत्व के अंगोछे का भरसक उपयोग किया.

देश में पहली बार मुसलामानों ने अपने आंदोलन में पूरे देश को शामिल किया और पूरे देश ने मुसलमानों का बिना शर्त समर्थन किया. पूरे देश ने भारतीय संविधान में लिखे 'हम भारत के लोग' की भावना का अक्षरशः पालन किया. दिल्ली के भयावह दंगे, मीडिया रिपोर्ट्स और फैक्ट फाइंडिंग रिपोर्ट्स से प्रमाणित हो चुके हैं कि गुजरात दंगे का ही प्रतिबिंब थे। इन दंगों की भयावहता को भी पिंजा तोड़, स्वराज इंडिया, अनहद जैसे संगठनों ने कम किया और कई जगह हिन्दू मुस्लिम एकता अटूट दिखी। दूसरा बिहार के फुलवारी शरीफ़ में एक मौत के अलावा लगभग 40 लोगों के घायल होने की खबर जिसमें 2 पुलिस वाले भी थे। इन दो घटनाओं के अलावा कहीं कोई अप्रिय घटना नहीं हुई.

यह कहना मुश्किल है कि कोरोना ने देश को देशव्यापी दंगे से बचा लिया या मोदी सरकार को 14 प्रतिशत नागरिकों के आगे झुकने से, लेकिन यह तो पक्का है कि कोरोना ने एनडीए की जन विरोधी फितरत को उजागर कर दिया. कोरोना ने धर्म पर भूख को जीत दिलाई. रोटी के मसले ने देश विरोधी ताकतों के सारे सपने चूर कर दिए. बिहार चुनाव इसका जीता जागता प्रमाण है. नीतीश कुमार ने बिहारी मजदूरों को देश के विभिन्न राज्यों में अपमानित किया. उन्हें अपने ही घर पैदल चल कर आने और पुलिस की बर्बरता झेलने पर मजबूर किया. लोगों के आँखों में आंसू थे. आज भी हैं. पूरा कारोबार चौपट हो गया. असंगठित श्रमिक वर्ग खाने खाने को तरस रहा है. कहीं कोई आर्थिक सहायता नहीं. छोटे कारोबार को फिर से उठाने के लिए देश के पास कोई प्लान नहीं. मुझे नहीं लगता कि जब तक छोटे कारोबारियों को फिर से बहाल किया जाएगा, तब तक भारत की अर्थव्यवस्था पटरी पर आ सकती है. इनमें छोटे प्राइवेट स्कूल, कोचिंग संस्थान, होटल, लॉज और शादी विवाह से जुड़े उद्योग प्रमुख हैं.

इस पूरे वर्ग का बिहार चुनाव में आक्रोश साफ़ है. बिहार आज नेताओं को मार मार कर भगा रहा है. नीतीश कुमार को पूरी पुलिसिया व्यवस्था के बीच मुर्दाबाद के नारे सुनने को मिल रहे हैं. बिहार में तीन चुनावों में पहली बार यह हुआ कि गाय और पाकिस्तान मुद्दा नहीं बने. बिहार भाजपा पुल गिना रही है. मोहन भागवत चुप हैं. ओवैसी कह रहे हैं कि सीमांचल को बाढ़ से मुक्त कराएंगे. अकबरउद्दीन ओवैसी गायब हैं और योगी को जनता ने मुर्दाबाद के नारों के साथ वापस भेज दिया है।

-द मार्निंग क्रॉनिकल हिन्दी

किसानों का भारत बंद
एक रिपोर्ट

संसद से पारित कृषि विधेयकों के खिलाफ 25 सितंबर को किसानों का राष्ट्रव्यापी गुस्सा सड़कों पर फूट पड़ा। इसके तहत किसानों ने पंजाब, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश में पूरी बंदी अमल कराई और तेलंगाना, शेष उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, ओडिशा, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल व अन्य राज्यों में बड़े पैमाने पर राजमार्ग बंद रखे व विरोध सभाएं कीं। 'भारत बंद' के चलते सामान्य जनजीवन पूरी तरह अस्त-व्यस्त रहा। अब तक पंजाब और हरियाणा की तुलना में शांत रहा उत्तर प्रदेश भी अब पूरी तरह से विरोध पर उतारू है। उत्तर प्रदेश के तमाम शहरों, कस्बों और गावों में किसान इस कानून के विरोध में रैली निकाल रहे हैं।

गाजियाबाद और नोएडा की सीमा पर प्रदर्शनकारी किसानों को पुलिस ने रोक दिया। भारतीय किसान यूनियन के सदस्यों ने सड़क जाम कर दिया था, जिसके बाद पुलिस ने बल का प्रयोग करते हुए उन्हें तितर-बितर किया। अधिकांश बाज़ार और व्यावसायिक संस्थान बंद रहे। वहीं कामकाजी लोगों ने भी दफ्तर से छुट्टी ले रखी थी। गाजियाबाद-नोएडा के बॉर्डर को पुलिस ने बैरिकेड लगाकर सील कर दिया था, ताकि किसान दिल्ली में न घुस सकें। पंजाब के किसान रेल ट्रैक पर ऐसे बैठे थे कि पता ही नहीं चल रहा था कि वहां कोई रेलवे ट्रैक भी है।

उत्तर प्रदेश के तमाम शहरों में किसानों ने विरोध रैली निकाली। नागरिक समाज के लोग भी किसानों के समर्थन में 'नरेंद्र मोदी, किसान विरोधी' और 'किसान बिल वापस लो' के पोस्टर बैनर लेकर सड़क पर उतर पड़े। कानपुर में ऑल इंडिया किसान महासंघ के बैनर तले किसान बिल के खिलाफ़ सड़कों पर उतरे। राजस्थान में भी सुबह से ही जबर्दस्त विरोध प्रदर्शन हुआ।

'भारत बंद' में सत्ता और प्रशासन के लोग प्रदर्शनकारियों पर ये आरोप लगाते आए हैं कि इसमें एंबुलेंस जैसी आपातकालीन सेवाओं को रोका गया है। लेकिन इस बार के 'भारत बंद' में कई जगह से इस तरह के वीडियो आए हैं, जहां एंबुलेंस जैसी आपातकालीन सर्विस की स्थिति में किसान चक्का जाम हटाकर एंबुलेंस को फौरन आगे जाने का रास्ता देते दिखे। पंजाब की कांग्रेस सरकार ने पंजाब पुलिस-प्रशासन को यह हिदायत दी कि पंजाब बंद के दौरान किसानों के प्रति नरम रवैया अपनाया जाए और उन पर कोई सख्ती या जबरदस्ती न की जाए। इसके साथ ही एंबुलेंस सेवा, सिविल सर्जनों, डॉक्टरों और पैरामेडिकल स्टाफ को भी तैयार रहने को कहा गया था, ताकि प्रदर्शन के दौरान किसी भी अप्रिय घटना में घायलों को तुरंत चिकित्सा सुविधा मुहैया कराई जा सके।

किसान विरोधी बिल के खिलाफ़ और किसानों के भारत बंद के समर्थन में कांग्रेस की यूथ विंग ने समूचे भारत के हर एक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश में मशाल रैली निकाली। पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, ग्वालियर, नागपुर, छत्तीसगढ़, महिदपुर, इंदौर, हरियाणा, खरगौन, उज्जैन, खंडवा, रीवां, वाराणसी, उत्तराखंड, तमिलनाडु, बिहार, सहारनपुर, कानपुर, इलाहाबाद, आंध्र प्रदेश, दादरा नगर हवेली, पंजाब, गोवा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, गुजरात समेत देश के लगभग हर राज्य के मुख्य शहरों में किसानों के समर्थन में युवा कांग्रेस ने मशाल रैली निकालकर संदेश दिया कि कांग्रेस किसानों के साथ खड़ी है।

बिहार की राजधानी पटना में किसानों की विरोध रैली से खफा भाजपा कार्यकर्ताओं और पप्पू यादव की पार्टी जाप के समर्थकों के बीच भिड़ंत हो गई। इलाहाबाद में आयोजित विरोध में कई किसान संगठन, ट्रेड यूनियन संगठन, छात्र व नागरिक संगठन मौजूद रहे। खेती के नए कानून, नया बिजली बिल 2020 और डीजल-पेट्रोल के दाम में वृद्धि के विरोध में नारे लगाए गये। विरोध-जुलूस निकालकर एक सभा भी की गई, जहां वक्ताओं ने कहा कि सरकार इन कानूनों को जबरन अमल करके विदेशी कम्पनियों व बड़े निजी प्रतिष्ठानों को सरकारी मंडियों के बाहर अपनी निजी मंडियां स्थापित करने की अनुमति दे रही है और इन 'गरीब' महारथियों को सभी टैक्सों से भी मुक्त कर रही है। किसान इस बात को समझ गये हैं कि इनके आने से सारी सरकारी खरीद, सरकारी भंडारण और राशन में अनाज की आपूर्ति समाप्त कर दी जाएगी। आज तक कभी भी ऐसा नहीं हुआ कि अच्छी फसल पैदावार के बाद इन प्रतिष्ठानों ने सरकारी रेट से बेहतर रेट दिया हो। मोदी सरकार जो कारपोरेट हितों की सेवक है, किसानों व देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी से भाग रही है और ढोंग रचकर दावा कर रही है कि विदेशी कम्पनियां अच्छा रेट देंगी।

वक्ताओं ने कहा कि मंडी बिल को 'दाम आश्वासन' और ठेका खेती बिल को 'आमदनी आश्वासन' कह कर धोखा देने की कोशिश की गई है। वे इन्हें आत्मनिर्भर विकास व किसानों का सुरक्षा कवच बताने का नाटक कर रहे हैं। ये कानून वास्तव में 'सरकारी मंडी बाई पास' तथा किसानों को 'कारपोरेट जाल मे फंसाने' के कानून हैं। किसानों की कोई बेड़ी नहीं खुलेगी, क्योंकि ग्रामीण मंडियां निजी कारपोरेशन के कब्जे में होंगी, किसान अनुबंध खेती द्वारा उनसे बंधे होंगे और उनकी जमीनें निजी सूदखोरों के हाथों गिरवी रखी होंगी। ये कानून उदारीकरण नीति का गतिमान रूप हैं और इनके अमल से किसानों पर कर्जे बढ़ेंगे और आत्म हत्याएं तेज होंगी।

इन कानूनों के द्वारा सरकार ने देश की खाद्यान्न सुरक्षा पर गम्भीर हमला किया है। उसने सभी अनाज, दालें, तिलहन, आलू व प्याज को आवश्यक वस्तुओं के माध्यम से नियमन से मुक्त कर दिया है। नया कानून असल में 'कालाबाजारी की मुक्ति' का कानून है, जिसमें फसल खरीद पर नियंत्रण करने वाले प्रतिष्ठानों को जमा खोरी व काला बाजारी की पूरी छूट होगी और राशन के 75 करोड़ लाभार्थियों को मजबूरन खुले बाजार से अनाज खरीदना होगा।

उन्होंने कहा कि आज भी सरकारी खरीद और एमएसपी बहुत कम ही अमल की जाती हैं और सरकार को इन पर अमल करने के लिए बाध्य करने का कोई कानून मौजूद ही नहीं है। फिर भी सरकार ने विदेशी कम्पनियों को कृषि बाजार पर नियंत्रण करने देने का कानून बनाया है। ❑

पर्यावरण सुधार को स्थाई रखने के लिए प्रभावी नीति बनानी होगी

❑ वल्लभाचार्य पाण्डेय

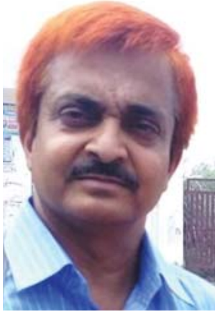

कोविद 19 महामारी के चलते वैश्विक लॉक डाउन ने भले ही तमाम देशों की अर्थव्यवस्था और सामाजिक ढांचे को अस्त व्यस्त कर दिया हो, लेकिन पर्यावरण के लिए यह काल बहुत सुखद साबित हुआ है. विश्व भर से आ रहे तमाम आंकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि उन 60 दिनों में पर्यावरणीय स्थिति में जो सुधार देखने को मिला है, वह विगत 60 वर्षों में किये गये तमाम प्रयासों और जलवायु परिवर्तन के तमाम वैश्विक समझौतों के बावजूद नही हो सका था. क्योटो प्रोटोकॉल या पेरिस जलवायु समझौते जैसी कोशिशों का भी कोई विशेष सकारात्मक प्रभाव नहीं मिल पाया था.

प्रकृति में उपस्थित सभी प्रकार के जीवधारी अपनी वृद्धि तथा विकास के साथ साथ सुव्यवस्थित एवं सुचारु जीवन चक्र को चलाते हैं, इसके लिए उन्हें स्वस्थ वातावरण की आवश्यकता होती है. वातावरण का एक निश्चित संगठन होता है तथा उसमें सभी प्रकार के जैविक एवं अजैविक पदार्थ एक निश्चित अनुपात में पाए जाते हैं. ऐसे वातावरण को संतुलित वातावरण कहते हैं. विगत 5-6 दशकों में हुए अँधा-धुंध और अनियंत्रित विकास के क्रम में हमारे वातावरण का संतुलन लगातार बिगड़ता ही रहा है.

जनवरी माह से ही पूरे विश्व में कई देशों में कोरोना संक्रमण की खबरें आने लगी थीं. इसके बाद क्रमशः उन देशों में लॉक डाउन होने लगा. सडकों पर वाहनों की संख्या 5 प्रतिशत रह गयी, तमाम औद्योगिक इकाइयों के बंद होने से उनसे होने वाला उत्सर्जन शून्य के बराबर हो गया. नगरीय कचरा निकलना काफी कम हुआ, साथ ही पानी का उपयोग भी घटा, इससे नदियों में पहुंचने वाले प्रदूषक तत्वों की मात्रा में भारी कमी आयी. निर्माण और खनन कार्य बंद होने से पर्यावरण को राहत मिली. नतीजा आंकड़ों के रूप में सामने आने लगा. वायु गुणवत्ता सूचकांक सामान्य से बेहतर स्थिति में पहुंचता हुआ दिखा. वहीं नदियों में घुलित आक्सीजन की मात्रा में अपेक्षाकृत उल्लेखनीय वृद्धि हुई. पानी घुलने वाले भारी तत्वों की मात्रा में कमी होने के कारण कई स्थान पर नदियों का जल लगभग पीने के योग्य होने के स्तर तक पहुंच गया. मात्र इन 60 दिनों में पर्यावरण सुधार की दिशा में जो सकारात्मक परिणाम मिला है, वैसा अरबों डालर खर्च कर के भी प्राप्त कर पाना संभव नही था.

कोरोना महामारी के इस गंभीर संकट से जूझते हुए हमें पर्यावरण में हुए इस सकारात्मक परिवर्तन को एक उपहार और अवसर के रूप में लेना चाहिए और इससे मिले अनुभव को व्यवहार में लाकर ऐसी नीति बनानी चाहिए, जिससे हम जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए किये जा रहे परम्परागत उपायों के अलावा कुछ व्यवहारिक और स्थाई उपाय करने की दिशा में आगे बढ़ें. कुछ नीतियां वैश्विक स्तर पर बननी चाहिए और कुछ आमजन को व्यवहार में लाने के स्तर की भी. उद्योगों को अनिवार्य रूप से न्यूनतम उत्सर्जन करने वाली तकनीक के प्रयोग की बाध्यता की जानी चाहिए. प्रत्येक महीने में दो से तीन दिन का एक साथ पूरे विश्व में लॉकडाउन किये जाने की सम्भावना तलाशी जा सकती है, इस दौरान अति आवश्यक सेवाओं और अनरवत चलने वाली इकाइयों के अलावा सभी गतिविधियों को पूरी तरह से बंद रखने के लिए एक वैश्विक समझौते की कार्ययोजना बनानी चाहिए. बड़े शहरों में वाहनों से हो रहे उत्सर्जन को कम करने के लिए सडको पर निजी वाहनों की संख्या कम करने के लिए ऑड-इवेन प्रणाली अनिवार्य की जानी चाहिए. यातायात के सार्वजनिक साधनों की सुलभ उपलब्धता इस दिशा में कारगर हो सकती है. जल प्रदूषण और नदियों में गिरने वाले प्रदूषित जल को शून्य के स्तर तक लाने के लिए व्यावहारिक नीति बनानी होगी. जल दोहन को कम करने और वर्षा जल के सौ प्रतिशत संरक्षण के लिए व्यावहारिक नीति बनानी होगी. नदियों पर विद्युत उत्पादन के लिए संचालित बड़ी बाँध परियोजनाओं को वापस लेने के लिए समयबद्ध नीति बनाते हुए वैकल्पिक ऊर्जा के तरीके पर काम करना होगा. छोटी नदियों को सदानीरा बनाने की दिशा में प्रभावी योजना कार्यान्वित करनी होगी. शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में तालाबों, कुण्डों और अन्य जल स्रोतों को पुनर्जीवित करना होगा.

इस आलोक में यह संदर्भ देना व्यावहारिक होगा कि भारत में ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के तालाबों पर अवैध कब्जे या पट्टे को हटाते हुए उसे सन 1952 के राजस्व रिकार्ड में अंकित क्षेत्रफल के अनुसार अतिक्रमण मुक्त करा कर पुनर्जीवित करने के लिए न्यायालय और शासन की तरफ से विभिन्न आदेश किये जाते रहे हैं. दुर्भाग्य से ये सभी आदेश सम्बंधित जिलाधिकारियों और उप जिलाधिकारियों की फाइलों में पड़े रह गये. आज के परिदृश्य में समाज के जागरूक लोगों और पर्यावरण के प्रति सचेत लोगों के लिए यह एक बड़ा अवसर है जब लगातार दबाव बनवा कर इन आदेशों का अधिकतम संभव अनुपालन कराने की कोशिश की जा सकती है.

हमें ऐसी नीति बनानी होगी, जिसमें पौधों की उपलब्धता पंचायत स्तर पर हो जाय. इच्छुक किसानों को नर्सरी का अस्थाई लाइसेंस दिया जाय, साथ में उन्हें आर्थिक सहायता देकर उनसे आवश्यक संख्या में पौधे तैयार कराए जायं. इससे पौधों की गुणवत्ता और उपलब्धता दोनों हो पाएगी, साथ ही स्थानीय लोगों को रोजगार भी मिलेगा.

पर्यावरणीय एवं औद्योगिक नीतियों में व्यावहारिक परिवर्तन के साथ साथ कोरोना संक्रमण के चलते हुए लॉकडाउन की अवधि में आमजन की जीवनचर्या और भौतिक उपभोग के तरीके में हुए परिवर्तन को आदत में शामिल करना होगा, साथ ही धरती माँ के आंचल में स्थाई रूप से सघन हरियाली का रंग भरना होगा, इससे हम विगत 60 दिन में हुए वातावरण के सकारात्मक सुधार को स्थाई रख पायेंगे और यदि प्रति माह पूरे विश्व में एक साथ 3 दिन के लॉकडाउन किये जाने जैसी कोई वैश्विक व्यवस्था निकल पायी तो हम निस्संदेह अपनी अगली पीढ़ियों को कम से कम वैसी आबोहवा दे पायेंगे जैसी हमारे पुरखों ने हमें दी थी। ❑

काम की इन दवाओं को याद रखिए

❑ संत समीर

भले ही ख़बरों में कहा जा रहा है कि कोरोना से ठीक होने वाले तेज़ी से बढ़ रहे हैं और वायरस की मारक क्षमता कमज़ोर पड़ गई है, पर सच्चाई जो मेरी समझ में आ रही है, उस हिसाब से गम्भीर मरीज़ों की संख्या हाल के दिनों में बढ़ी है।

अगर कोरोना पॉजिटिव सुनकर इसे आप साधारण फ्लू समझते हैं तो यह साधारण फ्लू की तरह ही चार-छह दिन परेशान करके ठीक हो जाएगा, लेकिन अगर आप भयभीत हो जाते हैं तो ज्यादा सम्भावना है कि आप ज्यादा परेशान होंगे और आईसीयू तक पहुँच जाएँ तो भी आश्चर्य नहीं। यह बताने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए कि ख़ुशी, आश्वस्ति, डर जैसी अलग-अलग स्थितियों में शरीर में कैसे-कैसे हार्मोनों का स्राव होता है और वे शरीर का कैसा-कैसा हाल कर देते हैं। ज्यादातर लोग इसी वजह से गम्भीर हालत में पहुँचे कि उन्हें बता दिया गया कि वे कोरोना पॉजिटिव हैं और इसी के साथ ऐसी दवाइयाँ खिलाई गईं, जो इस बीमारी की नहीं हैं। बुख़ार के सौ मरीज़ों का टेस्ट करके झूठी रिपोर्ट तैयार कीजिए और मरीज़ों को बता दीजिए कि उन्हें ख़तरनाक कैंसर का शुरुआती बुख़ार हुआ है। यक़ीन मानिए, कइयों की हालत गम्भीर होने लगेगी। साधारण बुख़ार के सौ मरीज़ों को रिपोर्ट पकड़ा दीजिए कि उनकी उम्र बस छह महीने और बची है, तो चार-छह ऐसे निकलेंगे, जो छह महीने से पहले ही मौत के मुहाने तक पहुँच जाएँगे। यह सब मैं मनगढ़न्त नहीं कह रहा हूँ, बल्कि ऐसे कई शोध बहुत पहले हो चुके हैं। पाँच-दस खुजली वाले लोग अगल-बगल बैठ जाएँ तो कुछ देर बाद आप भी एक-दो बार खुद को खुजाए बिना नहीं रह सकते। यह भी ध्यान दीजिए कि चीन ने चार दिन पहले स्पष्ट कह दिया है कि उसके यहाँ कोरोना जैसी कोई स्थिति नहीं बची है, इसलिए वह अपने यहाँ वैक्सीन जैसा कोई कार्यक्रम नहीं चलाएगा। असल बात तो यह है कि जो देश डब्ल्यूएचओ के साथ मिलकर दुनिया को बेवकूफ बनाने में लगा हुआ था, वह अपने यहाँ वैक्सीन का नाटक क्यों करेगा?

मास्क, हैण्डसेनेटाइज़र जैसी चीज़ें सिर्फ बकवास ही नहीं हैं, बल्कि आपको देर-सवेर ज्यादा मुसीबत में डालने वाली हैं। इनका जोर-शोर से प्रचार करने वाले अमिताभ बच्चन परिवार सहित, तो अमित शाह एण्ड कम्पनी दो दर्जन सांसदों सहित तमाम मास्क लगाते हुए भी कोरोना के जाल में आखिर फँसे ही। याद रखिए, नब्बे प्रतिशत से ज्यादा कोरोना मरीज़ पॉजिटिव होने से पहले मास्क और हैण्डसेनेटाइज़र की भरपूर सावधानियाँ बरत रहे थे। सोचिए कि जिनके पास ये सब सुविधाएँ नहीं थीं, वे भिखमङ्गे, कूड़ा बीनने वाले कुपोषणग्रस्त लोग न अस्पताल पहुँचे और न उनमें से किसी की मौत हुई। जैन साधुओं वाला एकदम हल्का वाला मास्क जेब में रखिए और प्रदूषण वाली जगह पर इसका इस्तेमाल कीजिए। लगे कि कुछ लोग आप पर थूक या छींक देंगे तो भी मास्क लगा लीजिए, ठीक ही है। उस जगह पर तो ख़ैर मजबूरन लगाना ही पड़ेगा, जहाँ मास्क लगवाने के लिए पुलिस लाठी भाँज रही हो। बाहर खुले में कहीं भी होइए तो नाक ढँककर रखने के बजाय खुली हवा में साँस लीजिए, फेफड़ों तक ऑक्सीजन की भरपूर मात्रा निर्बाध पहुँचने दीजिए। इससे आप ज्यादा सुरक्षित रहेंगे। असल बात शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को ठीक रखने की है और कुछ नहीं।

अब बात यह कि जिन लोगों की सूँघने की शक्ति कम हो गई है या पूरी चली गई है, वे क्या करें। मैंने ऐसे मरीज़ों के लक्षण पूछे और होम्योपैथी दवाएँ सुझाईं। किसी की पहले ही दिन तो किसी की दूसरे या तीसरे दिन सूँघने की शक्ति वापस आ गई। बायोकैमी की दो दवाएँ हैं, जिनको इस्तेमाल करने के लिए बहुत ज्यादा लक्षण मिलाने की ज़रूरत नहीं है। ये दवाएँ हैं नेट्रम म्यूर-6X (Natrum Mur-6X) और साइलीशिया-12X (Silicea-12X)। पहले नेट्रम म्यूर-6X की चार गोली जीभ पर रखकर चूसिए। इसके दो घण्टे बाद साइलीशिया-12X की चार गोली इसी तरह लीजिए। अगली बार फिर नेट्रम म्यूर। दवाएँ बारी-बारी यानी पर्याय-क्रम से लेनी हैं। ज्यादातर मामलों में पहले ही दिन गन्ध लेने की शक्ति वापस आने लगेगी। कुछ मामलों में दो-तीन दिन लग सकते हैं। दवा लेने के पहले और बाद में आधे घण्टे तक कुछ खाना-पीना नहीं है। प्रसङ्गवश बता देता हूँ कि इसके उलट यदि शरीर के किसी हिस्से से किसी तरह की तेज़ गन्ध आने लगे तो कुछ दिनों तक काली फॉस-6X (Kali Phos-6X) लीजिए। कुछ लोगों को खाने-पीने की चीज़ों या रसोई की गन्ध से परेशानी महसूस होने लगती है। ऐसे लोग कोल्चिकम-30 (Colchicum-30) सवेरे-दोपहर-शाम कुछ ख़ुराकें ले सकते हैं। इस एकमात्र लक्षण पर दूसरी कई परेशानियाँ भी जादुई ढङ्ग से ठीक हो सकती हैं।

सुरक्षा के सबसे बेहतर उपाय हैं—

1. दिन में दो बार आधा-आधा चम्मच हल्दी चूर्ण गर्म पानी से। 2. गुनगुने पानी में सेंधा नमक मिलाकर दो-तीन बार गरारा। 3. तुलसी-दालचीनी-मुलहठी-पीपर-इलायची-अदरक का काढ़ा दिन में दो-तीन बार। विकल्प के तौर पर गिलोय का काढ़ा ले सकते हैं। 4. अश्वगन्धा- (होम्योपैथी) दस-दस बूँद सवेरे-दोपहर-शाम चौथाई कप पानी में मिलाकर पिएँ। 5. नींबू-शहद-पानी दिन में दो-तीन बार। इसकी जगह तीन-चार मुसम्मी भी चूस सकते हैं।

जिन लोगों के आहार में सलाद, फल, हरी सब्ज़ियाँ पके भोजन की तुलना में ज्यादा मात्रा में शामिल रही हों, उन्हें ये सब उपाय भी आज़माने की कोई ख़ास ज़रूरत नहीं है। गाँव-गिराँव के जिन इलाक़ों में आज भी सावाँ, कोदो, मडुआ, अलसी, रागी, जौ वग़ैरह खाने की परम्परा बची है, वे सब भी मज़े में रहेंगे। गेहूँ के चलन ने हमें काफ़ी कमज़ोर किया है। चावल की नई किस्में गड़बड़ हैं। किसी ज़माने में भारत में प्रकृति की दी हुई चावल की 56 हज़ार से ज्यादा किस्में चलन में थीं, पर आज की तारीख़ में इनमें से ज्यादातर समाप्तप्राय हैं। गोरखपुरिया 'काला नमक' जैसी कुछ किस्मों पर ज़रूर भरोसा कर सकते हैं। काला नमक धान की एक ऐसी किस्म है, जिसे डायबिटीज़ वाले भी खा सकते हैं। कहते हैं कि महात्मा बुद्ध ने ज्ञानप्राप्ति के बाद काला नमक चावल से बनी खीर खाकर ही अपना उपवास तोड़ा था। यह स्वाद और सेहत, दोनों के लिहाज़ से बढ़िया है, पर अब आसानी से कहाँ मिलता है! हाइब्रिड और जैनेटिक इंजीनियरिंग ने स्वाद तो बेकार कर ही दिया है, 35-40 प्रतिशत पोषकता भी समाप्त कर दी है। देशी गन्ने, देशी मक्के का स्वाद कितने लोगों को मालूम है? ❑

पंजाब विधानसभा के विशेष सत्र में तीन नये बिल

❑ सुशील मानव

पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह द्वारा नरेंद्र मोदी की केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए तीनों कृषि कानूनों को रद्द करने वाले तीन कृषि विधेयक पंजाब विधानसभा में पेश किए गए। पंजाब विधानसभा का यह विशेष सत्र केंद्र के इन कृषि कानूनों को रद्द करने के लिए ही बुलाया गया था। इस विशेष सत्र के दूसरे दिन सदन के नेता के तौर पर मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने पहले केन्द्र के तीनों कानूनों के खिलाफ प्रस्ताव पेश किया, जिसे सदन द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के बाद फिर उन्होंने तीनों विधेयक पेश किए। ये तीन विधेयक हैं- किसान उत्पादन व्यापार एवं वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) विशेष प्रावधान एवं पंजाब संशोधन विधेयक, 2020 (Amendment to the Farmers Produce Facilitation Act)

आवश्यक वस्तु (विशेष प्रावधान और पंजाब संशोधन) विधेयक, 2020 (Amendment to the Essential Commodities Act)

और किसान (सशक्तीकरण और संरक्षण) समझौता मूल्य आश्वासन एवं कृषि सेवा (विशेष प्रावधान और पंजाब संशोधन) विधेयक 2020 (Amendment to the Farmers Agreement and Farm Services Act – to counter the central farm laws)

पंजाब सरकार द्वारा पारित इन ऐतिहासिक बिलों में प्रस्ताव किया गया है कि गेहूं एमएसपी से कम मूल्य पर खरीदने/बेचने वालों को 3 साल की सजा और जुर्माना किया जाएगा। किसानों के लिए 2.5 एकड़ से अधिक लैंड अटैचमेंट की स्वीकृति नहीं है, जमाखोरी और कालाबाजारी पर रोक जैसी बातें भी मोटे तौर पर शामिल हैं।

पंजाब विधानसभा में प्रस्ताव पेश करने के बाद पंजाब के मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने कहा, 'कृषि राज्य का विषय है, लेकिन केन्द्र ने इसे नजरअंदाज कर दिया। मुझे काफी ताज्जुब है कि आखिर भारत सरकार करना क्या चाहती है। केंद्र सरकार ने संविधान का उल्लंघन किया हैं। पंजाब ने देश को खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बनाया है। अब उन्हीं किसानों को बर्बाद किया जा रहा है। क्या यह इंसाफ़ है?'

ऑपरेशन ब्लू स्टार के समय अपने इस्तीफे को याद करते हुए उन्होंने कहा, 'मैं इस्तीफा देने या अपनी सरकार को बर्खास्त किए जाने से नहीं डरता हूं। मैं किसानों के साथ अन्याय होता देख खामोश नहीं रहूंगा, न ही उन्हें बर्बाद होने दूंगा।'

केंद्र सरकार के कृषि कानून को रद्द करने वाले तीनों कृषि विधेयकों को पेश करने के बाद मुख्यमंत्री ने किसानों से सड़क जाम और रेल रोको अभियान खत्म करने की अपील करते हुए कहा, 'हम आपके साथ खड़े हो चुके हैं, अब हमारे साथ खड़े होने की बारी आपकी है।'

विधानसभा अध्यक्ष राणा केपी सिंह ने सदन में कहा, 'विधानसभा केंद्र के कानून पर गहरा खेद व्यक्त करती है। विधानसभा ने पहले भी इनके खिलाफ प्रस्ताव पास किया था, पर फिर भी केंद्र सरकार ने कानून पारित कर दिए। केंद्र ने व्यापारियों के लिए ये कानून बनाए हैं न कि खेती या किसानों के लिए।'

कांग्रेस विधायक नवजोत सिंह सिद्धू ने चर्चा में भागीदारी करते हुए कहा, 'केंद्र के नए कानून मंडियों को बर्बाद कर देंगे। जहां फ्री मंडियां है, वहां के किसानों की हालत क्या है। जो केंद्र सरकार जीएसटी का पैसा नहीं दे रही, वह किसानों को उनके खाते में पैसे डाल देगी?'

- जनचौक

सपना क्या पूरा करेंगे जो लोकनायक के लिए एक सड़क तक न बनवा सके

❑ एलके सिंह

जेपी लगभग सभी राजनीतिक दलों के लिए सदैव खास रहे हैं। आपातकाल की बरसी हो या उनकी जयंती, वे पूजनीय हो जाते हैं। जब कोई चुनाव आता है तो वही जेपी सबके आदर्श बन जाते हैं, लेकिन दुखद बात यह है कि संपूर्ण क्रांति के प्रणेता उसी जेपी के गांव जाने वाली सड़क का आज तक कायाकल्प नहीं हो सका है। यहां की हालत पतली सी बीएसटी बांध की वह सड़क ही बयां कर रही कि कौन जेपी का सच्चा भक्त है। जाहिर है, बिहार चुनाव के चलते उनकी जयंती में कई शीर्ष नेता भी उनको नमन करने उनके गांव पहुंचें होंगे। जेपी की सोच की चर्चा और जेपी के मुद्दों पर बात भी करेंगे, लेकिन जेपी के गांव के लोग किस हाल में हैं, वहां की सड़क किस हाल में है, इस पर कोई नहीं सोचेगा।

महात्मा गांधी की जयंती के एक दिन पूर्व मैं जेपी के गांव सिताबदियारा में था। वहां जाने वाली सड़क यूपी-बिहार दोनों सीमा के गांवों की लाइफ लाइन है। बलिया-छपरा एनएच-31 के चांददियर चौराहे से निकलती यह सड़क सिताबदियारा, जयप्रकाशनगर, दोकटी, लालगंज होते हुए पुनः टेंगरही में आकर उसी एनएच से जुड़ जाती है। इसकी कुल दूरी 22 किमी है। चांददियर से सिताबदियारा तक इसकी दूरी नौ किमी है।

पूरी तरह उखड़ी पड़ी यह सड़क जेपी की तमाम यादों को समेटे चौड़ीकरण की आस में अब बूढ़ी हो चली है। सिताबदियारा में यूपी और बिहार दोनों सीमा के लोगों के लिए यह लाइफ-लाइन इसलिए कही जाती है कि यूपी-बिहार दोनों तरफ के लोग इसी सड़क पर चलते हैं। इस सड़क को पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने बनवाया था। शीर्ष नेताओं से लेकर दूर-दराज के शोधकर्ता भी जेपी को नमन करने इसी सड़क से सिताबदियारा पहुंचते हैं। बैरिया, बलिया, छपरा, पटना आदि स्थानों से आने वाले विभिन्न प्रकार के वाहन इसी सड़क से होकर सिताबदियारा जाते हैं। इसके बावजूद भी जेपी के भक्तों की नजरों से यह सड़क पूरी तरह गायब है।

यूपी-बिहार दोनों सीमा में बंटे सिताबदियारा के लिए अब यूपी बिहार दोनों सीमा में दो ट्रस्ट स्थापित हैं। यूपी के जयप्रकाश नगर में पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने जेपी निवास के पास जेपी नारायण स्मारक प्रतिष्ठान की स्थापना की है। वहीं अब बिहार सीमा के लाला टोला में बिहार के सीएम नीतीश कुमार और प्रधानमंत्री मोदी ने भव्य राष्ट्रीय जेपी संग्रहालय का निर्माण कराया है, लेकिन इन संग्रहालयों तक पहुंचने के लिए किसी को भी इस सड़क पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ❑

गांधी जयंती पर कार्यक्रम

गांधी जी की 150वीं जयंती के उपलक्ष में विकल्प संस्था द्वारा 'एक मुट्ठी अन्न सब रहे प्रसन्न' के अंतर्गत जो सर्वोदय पात्र शहर के गणमान्य लोगों के यहां लगाए गए हैं, उनमें एकत्रित लगभग 150 किलो अन्न का वितरण आपदा से प्रभावित तथा आर्थिक रूप से टूट चुके वरिष्ठ नागरिकों एवं दिव्यांग परिवार जनों के बीच किया गया। कार्यक्रम का शुभारंभ गांधी स्मारक स्थल कसगरान पर समिति के अध्यक्ष जगदीश निमिष की अध्यक्षता में सर्वधर्म प्रार्थना सभा से हुआ। तत्पश्चात सभी वक्ताओं ने गांधी जी एवं शास्त्री जी को श्रद्धांजलि देते हुए उनके दिखाए रास्ते पर चलने का व्रत लिया। कार्यक्रम में विकल्प संस्था के अध्यक्ष राज नारायण ने कहा कि कोविड-19 में लॉकडाउन के दौरान आर्थिक रूप से टूट चुके परिवारों की अन्य के द्वारा मदद करना भी गांधी जी का ही कार्य है। हमारी कोशिश होगी कि इस सप्ताह 151 परिवारों तक हमारी सहायता पहुंचे। कार्यक्रम में जितेंद्र आर्य पार्षद, राजकुमार गुप्ता, सुनील चौधरी, उपेंद्र सक्सेना, जगदीश निमिष आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किए। **-राज नारायण**

जमशेदपुर में गांधी जयंती

गांधी की 150वीं जयंती के अवसर पर गांधी शांति प्रतिष्ठान की ओर से अंबेडकर मूर्ति से लेकर गांधी घाट तक संकल्प यात्रा का आयोजन किया गया। संकल्प यात्रा का उद्देश्य समाज में धार्मिक सद्भाव, जाति मुक्ति, मानवता एवं स्वतंत्रता की स्थापना करना और इसके लिए जन जागरण करना था।

इस यात्रा में सभी सहभागी खादी निर्मित गांधी टोपी पहने हुए थे और उनके हाथों में गांधी विचार के पोस्टर थे।इन पोस्टरों पर लिखा हुआ था - भगवान का कोई धर्म नहीं होता है, जो जमीन पर मेहनत करता है, वही उसका मालिक है, धर्मांधता के लिए न जीना अच्छा है और न मरना,बिना मजदूरी के खाना चोरी है आदि। इस यात्रा में हाथरस में मनीषा वाल्मीकि के साथ हुई बर्बरता को मानवता पर कलंक बताया गया और उसकी निंदा की गई।

यात्रा में शामिल सभी सदस्यों ने सर्वप्रथम अंबेडकर मूर्ति के निकट जमा होकर माल्यार्पण किया। फिर सभी ने वहां से गांधी घाट पहुंचकर गांधी जी की मूर्ति पर पुष्पांजलि अर्पित की। अंत में यात्रियों ने नारे लगाकर मनीषा वाल्मिकी को न्याय और बेरोजगारों को रोजगार देने की मांग की। साथ ही संकल्प लिया कि पूरी दुनिया को बेहतर बनाने के लिए मानवीय मूल्यों के आधार पर अहिंसक समाज के नवनिर्माण का प्रयास जारी रखा जाएगा।

इस कार्यक्रम का संचालन सुख चंद्र झा, निशांत अखिलेश अंकुर सारस्वत, अरविंद अंजुम एवं आलोक कुमार ने किया। **-अरविंद अंजुम**

उन्नाव में गांधी जयंती

महात्मा गांधी व लाल बहादुर शास्त्री की जयंती के अवसर पर चौधरी खजान सिंह महाविद्यालय में उन्नाव सर्वोदय मण्डल द्वारा आयोजित 'गांधीजी और चंपारन सत्याग्रह' नामक परिचर्चा व विमर्श समारोह कृष्णपाल सिंह की अध्यक्षता और कहानीकार नसीर अहमद के संचालन में सम्पन्न हुआ.

इस अवसर पर प्रबंधक मुकेश कुमार यादव, अजब सिंह यादव, रामशंकर, संजीव, आलोक, सुशील, अनुपम, पुत्तनलाल पाल, सीताराम गुप्ता, शैलेंद्र त्रिवेदी, उमाशंकर यादव, दिनेश प्रियमन सहित मैं स्वयं भी मौजूद रहा. **-रघुराज मगन**

ओडिशा में गांधी जयंती

मयूरभंज जिला सर्वोदय मंडल एवं गाँधी-150 ओडिशा के समूह द्वारा गाँधी–कस्तूरबा के 150वें जयंती वर्ष का समापन 2 अक्टूबर को रामधुन, सफाई, गाँधी चित्र प्रदर्शनी, नशामुक्ति के लिए संकल्प, ग्रामसभा की भागीदारी, गाँधी जी की जीवनी पुस्तक के व्यापक वितरण के साथ सम्पन्न हुआ। दूरदर्शन पर मोहन से महात्मा नाटक प्रसारित किया गया। 50 गाँवों में रामधुन गायी गयी। अन्त्योदय चेतना मंडल तथा जिला सर्वोदय मंडल के साथी समूह ने गाँधी जी की मूर्ति पर भजन का आयोजन किया। रासगोविन्दपुर में आमसभा का आयोजन किया गया। बाज़ार समिति, युवा संघ, विनोद बिहारी कॉलेज के अध्यापक, पंचायत के प्रमुख एवं स्थानीय मुखिया जफ़र भाई ने गाँधी जी को श्रद्धा सुमन अर्पित किये।

बारीपदा गांधी पार्क में महात्मा गाँधी, कस्तूरबा गाँधी एवं लालबहादुर शास्त्री को श्रद्धांजलि दी गयी। नार्थ ओडिशा यूनिवर्सिटी के साथ मिलकर करीब 100 अध्यापकों एवं गाँधी मार्ग पर चलने वाली छात्राओं के सामने आज की चुनौती एवं महात्मा गाँधी के भारत के संदर्भ में व्याखान आयोजित हुए। **-आदित्य पटनायक**

बोड़ाम में गांधी जयंती

2 अक्टूबर 2020 को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एवं लाल बहादुर शास्त्री की जयंती पर छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी तथा जनमुक्ति संघर्ष वाहिनी के संयुक्त तत्वावधान में बोड़ाम प्रखण्ड के भुला गाँव में दोनों महापुरुषों की तस्वीर पर सभी साथियों ने पुष्प माला पहनाकर श्रद्धांजलि अर्पित की। इस अवसर पर बच्चों के बीच किताब का वितरण भी किया गया। कार्यक्रम में अपने विचार रखते हुए वाहिनी के दिलीप कुमार ने कहा कि जाति, धर्म, लिंग, क्षेत्र, भाषा, संस्कृति, नस्ल, रंग, वंश और वर्ग आधारित सामाजिक, आर्थिक भेदभाव और गैर बराबरी के खात्मे एवं समानता की स्थापना के लिए हम हमेशा प्रतिबद्ध रहेंगे।

साथी विश्वनाथ ने कहा कि हम भारतीय संविधान के अनुसार समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता की बुनियाद पर लोकतांत्रिक समाज व्यवस्था के निर्माण के लिए सक्रिय एवं सचेष्ट रहेंगे और विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की हिफाजत के लिए कटिबद्ध रहेंगे। अजय कुमार ने कहा कि हम समग्र रूप से मानवीयता और विश्वबंधुत्व तथा अमन और शांति के लिए अपनी प्रतिबद्धता दोहराते हुए एक बेहतर और मानवीय दुनिया के लिए स्वयं को संकल्पित करते हैं।

इस मौके पर अजय कुमार, दिलीप कुमार, विजय कुमार, विश्वनाथ, रुम्पा कुमारी, सविता गोराई, सावित्री सिंह, दुर्गामनी महतो, सुनीता सिंह, शीला महतो, पुष्पा सिंह, आशालता मुर्मू आदि उपस्थित रहे।

-विश्वनाथ आज़ाद

गांधी भवन में गांधी जयंती

गांधी विश्वव्यापी हैं। उनके द्वारा किये गये कार्य युगों-युगों तक आचरण करने के लायक हैं। विश्वव्यापी आर्थिक, सामरिक, सामाजिक समस्याओं का समाधान गांधी विचार में निहित है। आज गांधी को केवल याद करने का दिन नहीं, बल्कि इक्कीसवीं शताब्दी में उनके एकादश व्रतों को आचरण में लाने का संकल्प लेने का दिन है। यह विचार गांधी जयंती के दिन एक कार्यक्रम में डॉ. भावेन्द्र शरद जैन ने व्यक्त किये। कार्यक्रम का शुभारंभ काजी मोहम्मद तैय्यब अंसारी, डॉ. पद्मजा शर्मा, डॉ. अजयवर्धन आचार्य द्वारा गांधी चित्र पर सूत की माला एवं उपस्थित जनों द्वारा पुष्प अर्पित कर किया गया। सर्वधर्म प्रार्थना धर्मेश रूटिया द्वारा प्रस्तुत की गयी। इस अवसर पर कपिल परिहार ने बापू के प्रिय भजन 'वैष्णव जन तो तेने कहिए, पीर पराई जाने रे', डॉ. शैला माहेश्वरी ने 'राम नाम रट रे मनवा' भजन गया।

सेवाग्राम से आशा बोथरा, जोधपुर से मोतीलाल बोहरा, गीता, हिना भट्टाचार्या और डॉ. ओमप्रकाश टाक ने शुभकामना संदेश भेजे। प्रातः डॉ. शैलेश यादव के नेतृत्व में युवाओं की टीन ने परिसर में श्रमदान किया।

–डॉ. भावेन्द्र शरद जैन

वृक्षारोपण कार्यक्रम सम्पन्न

सर्व सेवा संघ परिसर, वाराणसी की ओर से गांधी और शास्त्री जयंती की पूर्व संध्या पर 1 अक्टूबर 2020 को परिसर स्थित गांधी प्रतिमा के चबूतरे के किनारे-किनारे वृक्षारोपण किया गया।

इस अवसर पर गांधी विचारनिष्ठ मदनमोहन वर्मा, एसडीएम सदर, वाराणसी अपने सहयोगियों सहित पूरे उत्साह के साथ उपस्थित रहे और उन्होंने अपने हाथों कई पौधे भी लगाये। डीएवी कॉलेज, वाराणसी के प्राध्यापक ओपी चौधरी, सर्व सेवा संघ परिसर के निवासियों, प्रकाशन तथा गांधी आश्रम के कार्यकर्ताओं ने भी वृक्षारोपण किया। **-स. ज. प्रतिनिधि**

जेपी जयंती पर कार्यक्रम

सेवाग्राम में जेपी जयंती

सर्व सेवा संघ, सेवाग्राम-वर्धा में लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 118वीं जयंती पर कार्यक्रम का आयोजन हुआ।

सर्वप्रथम सर्व सेवा संघ के कार्यकारी अध्यक्ष चंदन पाल की अगुवाई में जयप्रकाश नारायण के चित्र पर माल्यार्पण कर उन्हें याद किया गया। कार्यक्रम में उपस्थित लोगों ने सर्वधर्म प्रार्थना और सामूहिक भजन के बाद लोकनायक के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डाला।

कार्यकारी अध्यक्ष चंदन पाल ने कहा कि जयप्रकाश जी की वाणी और उनके आदर्श हम सभी को हमेशा प्रेरणा देते रहेंगे। लोकतंत्र की रक्षा के लिए उन्होंने जो त्याग व संघर्ष का कीर्तिमान स्थापित किया है, वह अविस्मरणीय है।

इस अवसर पर सर्व सेवा संघ के प्रबंधक ट्रस्टी अशोक कुमार शरण, गांधी कार्यकर्ता अविनाश काकड़े, भूदान-ग्रामदान के संयोजक गौरांग महापात्र ने भी अपने-अपने विचार व्यक्त करते हुए लोकनायक को नमन किया। कार्यक्रम में कार्यकर्ताओं सहित अन्य स्थानीय लोग भी उपस्थित रहे। **–गौरांग महापात्र**

विनोबा ज्ञान मन्दिर में जेपी जयंती

विनोबा ज्ञान मन्दिर में लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 119 वीं जयन्ती मनायी गयी। इस अवसर पर कताई, सर्वधर्म प्रार्थना एवं श्रद्धांजलि का आयोजन किया गया। इस अवसर पर विनोबा ज्ञान मन्दिर के मंत्री डॉ. अवध प्रसाद ने जेपी के जीवन के बारे में संक्षिप्त जानकारी देते हुए कहा कि उनका जीवन शीशे की तरह साफ-सुधरा था। जे.पी. का संपूर्ण जीवन अध्यात्म एवं क्रान्ति दोनों का परस्पर पूरक था। उनके क्रान्तिकारी जीवन का सक्रिय एवं प्रभावी उदाहरण 1942 में जेल से निकल जाना है। सर्वजन के हित में उन्होने अहिंसक एवं शान्तिमय क्रान्ति के आचार्य विनोबा भावे द्वारा संचालित भूदान आन्दोलन के लिए अपना जीवनदान देकर सबको आश्चर्य चकित कर दिया था। अपने जीवन के अंतिम वर्षों में संपूर्ण क्रान्ति का आवाहन कर देश को नयी दिशा दी और राजनैतिक दलों को एक सूत्र में बांधा।

कार्यक्रम में उपस्थित सहभागियों में सवाई सिंह, जयसिंह राजोरिया, करुणा, सचिन शर्मा, हजारी लाल आदि के नाम प्रमुख हैं। कार्यक्रम का संचालन डॉ. अमित कुमार ने किया। **-अमित कुमार**

बोकारो में जेपी जयंती

सर्वोदय मण्डल बोकारो के तत्वाधान में बोकारो कर्मचारी पंचायत के कार्यालय में लोकनायक जयप्रकाश नारायण की पुण्यतिथि मनाई गई। इस कार्यक्रम में लोकनायक जयप्रकाश नारायण की तस्वीर पर पुष्प अर्पित किये गये और एक गोष्ठी भी हुई। गोष्ठी को संबोधित करने वालों में सर्वोदय मण्डल के जिला अध्यक्ष अदीप कुमार, महावीर कुमार, जयप्रकाश स्मारक समिति के अध्यक्ष अरुण किशोर, स्वराज्य इण्डिया के रामाकांत वर्मा, एनएपीएम की प्रीति रंजन और राजीव भूषण थे। सभी ने लोकनायक जयप्रकाश नारायण द्वारा किए गए कार्यों एवं जीवन पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम में राजेश कुमार, पुन्या नन्द दास मनोज भारती और प्रदीप कुमार शामिल हुए। मनोज भारती ने लोकनायक जयप्रकाश नारायण का पसंदीदा क्रांति गीत—जयप्रकाश का बिगुल बजा तो जाग उठी तरुणाई है—गाकर बिहार आंदोलन की यादें ताजा कर दीं। छात्र युवा संघर्ष वाहिनी के प्रथम प्रदेश संयोजक अरुण दास के निधन पर शोक व्यक्त किया गया और दो मिनट मौन रहकर श्रद्धांजलि अर्पित की गई। कार्यक्रम की अध्यक्षता जयप्रकाश स्मारक समिति के अध्यक्ष अरुण किशोर ने की।

-अदीप कुमार

पारनाला में जेपी जयंती

जेपी स्मृति स्थल पारनाला, कुम्हार टोली पर वरिष्ठ शिक्षक व सर्वोदय मंडल के सदस्य कृष्णाराम ठाकुर, डॉ. विश्वनाथ आजाद, राज्य संयोजक, झारखण्ड सर्वोदय मंडल व राहुल कुमार ने जेपी प्रतिमा के लिए संयुक्त रूप से शिलान्यास किया और पुष्पांजलि अर्पित की।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 41वीं पुण्य तिथि पर उन्हें पुष्पांजलि अर्पित करते हुए डॉ. विश्वनाथ आजाद ने 74 छात्र आंदोलन को याद करते हुए बताया कि किस तरह गुजरात के छात्र आंदोलन को देशव्यापी आयाम देने में लोक नायक ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और एक तानाशाह सरकार को कोर्ट और वोट दोनों में धराशायी किया। कार्यक्रम में डा. बिन्नी, निभा सिन्हा, हिना परवीन, लुसी एफ्रेम, प्रीति गुड़िया, सौरभ सुमन, मो. रिजवान युवा संयोजक राहुल कुमार, जोसेफ संजीव तिर्की, अनिता टोप्पो आदि शामिल रहे।

-हिना परवीन

मुसाबनी में जेपी जयंती

लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 118 वी जयंती के अवसर पर जनमुक्ति संघर्ष वाहिनी और झारखंड नवनिर्माण अभियान की ओर से नेतरा गांव में सर्वप्रथम जेपी की फोटो पर पुष्पांजलि अर्पित की गयी। इसके बाद दोनों संगठनों की ओर से ग्रामीणों के बीच पौधा वितरण किया गया। संपूर्ण क्रांति आंदोलन से जुड़े हुए कार्यकर्ता पिछले 5 वर्षों से लगातार गांवों में पौधा वितरण कर रहे हैं और अब तक लगभग 35000 पौधों का वितरण कर चुके हैं। साल, नीम, जामुन, शरीफा, महोगनी, पपीता आदि पौधे अभी तक बांटे जा चुके हैं। पर्यावरण की रक्षा व क्लाइमेट चेंज के दुष्प्रभाव से बचने के लिए पौधा वितरण एक सकारात्मक कदम है। संगठन की ओर से मदन मोहन,कुमार दिलीप, सुकलाल हसदा, मुकेश कर्मकार व दामू प्रमाणिक ने ग्रामीणों के बीच पौधा वितरण किया। इस पूरे कार्यक्रम का नेतृत्व ग्राम प्रधान मेघराज सोरेन ने किया।

-मेघराज सोरेन

हजारीबाग में जेपी जयंती

11 अक्टूबर दिन रविवार को लोक नायक जयप्रकाश नारायण की 118वीं जयंती, गांधी विनोबा जयप्रकाश चिंतन केन्द्र, विनोबा भावे विश्वविद्यालय में मनाई गई। गांधी आश्रम परिसर में भी एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता गिरिजा सतीश ने की। गोष्ठी को संबोधित करते हुए डॉ. विश्वनाथ आजाद ने 1974 के बिहार आंदोलन और आपातकाल को याद करते हुए कहा कि आज देश की परिस्थितियां उससे भी अधिक शोचनीय है। आज हमें एक अघोषित आपातकाल का सामना करना पड़ रहा है। देश की पूरी आबादी कैदी बनकर रह गई है। वर्तमान सरकार के खिलाफ आवाज उठाने वालों को राष्ट्रद्रोही के तगमे से नवाजा जा रहा है। डॉ विश्वनाथ आजाद ने आगे कहा कि गांधी और जेपी में काफी समानता रही है, खास कर आमजन के अधिकारों के प्रति। अधिवक्ता स्वरूपचंद ने भी जेपी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला और अपने अनुभव साझा किये। गोष्ठी में उपस्थित राहुल कुमार ने कहा कि अभी वे जेपी के संबंध में जानकारी प्राप्त कर रहे हैं। युवक सत्येंद्र ने अपने अंदाज में अपने विचार व्यक्त किए। उसके उपरांत सभी ने गांधी जी को पुष्पांजलि अर्पित की। **–आशालता मुर्मू**

किसान आन्दोलन को तेज करने का आह्वान

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी तथा जय जवान जय किसान के प्रणेता लालबहादुर शास्त्री की जयन्ती के अवसर पर दोनों महापुरुषों के चित्र पर माल्यार्पण तथा पुष्पाजलि अर्पित करने के बाद ध्वजा आश्रम, खादी भण्डार सीतामढ़ी के प्रांगण में जिला सर्वोदय मंडल सीतामढ़ी के तत्वावधान में सर्वोदय के साथियों ने 'खेती के कंपनीकरण पर रोक तथा लोकतंत्र व अभिव्यक्ति की आजादी के सशक्तिकरण जैसे सुलगते सवालों पर एक दिवसीय 'उपवास तथा सत्याग्रह' किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष डॉ. आनन्द किशोर ने की। मौके पर अन्य सहमना संगठनों के साथियों तथा बुद्धिजीवियों के साथ 'बापू के विचार की प्रासंगिकता' विषय पर एक संगोष्ठी भी आयोजित की गई। विषय प्रवेश कराते हुए डॉ. आनन्द किशोर ने कहा कि गांधी के सत्य,अहिंसा तथा ग्राम स्वराज का विचार पूरी दुनिया के लिए आज ज्यादा प्रासंगिक है। वक्ताओं ने कहा कि जब धर्म, जाति, भाषा, राष्ट्रीयता के नाम पर घृणा का माहौल बनाया जाता हो, खेती का कंपनीकरण तथा अभिव्यक्ति की आजादी को नियंत्रित करने और लोकतंत्र को कमजोर करने का षडयंत्र हो रहा हो, ऐसे वक्त में मानवता के सामने गांधी विचार ही एकमात्र विकल्प है। प्रेम और अहिंसा की गतिशीलता को समझकर छात्र तथा युवा पीढ़ी को आगे आने की जरूरत है। संगोष्ठी, उपवास एवं सत्याग्रह के अंत में वरिष्ठ कम्यूनिस्ट नेता राजकिशोर राय तथा अवकाश प्राप्त अभियंता शिशिर सिन्हा ने शरबत पिला कर अध्यक्ष, मंत्री तथा सर्वोदय कार्यकर्ताओं का उपवास समाप्त कराया। **–डॉ. आनन्द किशोर**

जमशेदपुर में प्रतिवाद कार्यक्रम

जमशेदपुर शहर के प्रबुद्ध नागरिकों एवं समाजकर्मियों ने साकची गोल चक्कर पर इकट्ठा होकर सामाजिक कार्यकर्ता स्टेन स्वामी की गिरफ्तारी का प्रतिवाद किया। एन आई ए की टीम ने भीमा कोरेगांव मामले के एक फर्जी मुकदमे में 8 अक्टूबर को रांची स्थित निवास बगईचा से उन्हें गिरफ्तार किया और आनन-फानन में मुंबई ले गई।

प्रतिवाद में शामिल लोगों ने कहा कि दक्षिणपंथी केंद्र सरकार द्वारा बीमार एवं बुजुर्ग स्टेन स्वामी को जिस तरह से गिरफ्तार किया गया, वह अत्यंत अमानवीय है। विगत कई वर्षों से यह देखने में आ रहा है कि जो भी इस सरकार का विरोध करते हैं, उन्हें फर्जी मुकदमों में फंसाकर जेलों में बंद किया जा रहा है। भीमा-कोरेगांव एवं दिल्ली दंगे में कई सामाजिक कार्यकर्ताओं, बुद्धिजीवियों, पत्रकारों और वकीलों को फंसाया गया है, उन्हें जेल में बंद किया गया है।

केंद्र सरकार न केवल लोकतांत्रिक अधिकारों का दमन कर रही है, बल्कि देश के फेडरल ढांचे को भी ध्वस्त करने में लगी हुई है। यूएपीए, एनएसए एवं राजद्रोह कानून का धड़ल्ले से दुरुपयोग हो रहा है। वैसे भी ये कानून औपनिवेशिक हित एवं परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। अक्सर इन कानूनों का इस्तेमाल लोकतांत्रिक आंदोलनों और प्रयासों को कुचलने में किया गया है।

जमशेदपुर के नागरिक गण स्टेन स्वामी सहित तमाम राजनीतिक बंदियों की बिना शर्त रिहाई व राजद्रोह कानून को रद्द करने तथा फेडरल ढांचे की हिमायत करने की मांग करते हैं।

कार्यक्रम में शामिल होने वालों में मदन मोहन, कुमार चंद्र मार्डी, सुजय राय, मंथन, निशांत अखिलेश, अरविंद अंजुम, ऋषभ, रंजन, विकास कुमार, प्रशांत, अंकित, बबलू, शशि कुमार, ओमप्रकाश, डॉ. राम कवींद्र, जगत, दीपक, रंजीत, बीएन प्रसाद, विजेंद्र शर्मा, सुभाषचंद्र गुप्ता, अविनाश कुमार, अजय शर्मा, बसंती लकड़ा, धर्मराज हेम्ब्रम, शंकर नायक, फादर फ्रांसिस, उजागिर यादव, रवीन्द्र प्रसाद आदि शामिल हुए।

-मदन मोहन/ अरविंद अंजुम

गन्ना किसानों ने दिया ज्ञापन

बिहार सरकार के गन्ना विकास विभाग द्वारा दायर रीगा थाना काण्ड संख्या 244/20 में साजिश तथा धोखाधड़ी के तहत मिल के सीएमडी ओपी धानुका के खिलाफ न्यायालय में चल रहे मामले में संयुक्त किसान संघर्ष मोर्चा ने लोक अभियोजक अरुण कुमार सिंह से सकारात्मक पहल करने का अनुरोध किया है। मोर्चा के संरक्षक डॉ. आनंद किशोर, अध्यक्ष जलंधर यदुवंशी तथा उपाध्यक्ष लालबाबू मिश्रा ने लोक अभियोजक से मिलकर संबधित प्रपत्र सौपते हुए बताया कि रीगा चीनी मिल प्रबंधन की साजिश से हजारों किसानों की जिन्दगी तबाह है। एक तो उन्हें वितीय मामलों में दागी बना देने से उनकी प्रतिष्ठा गई। दूसरे कहीं किसी बैंक से कोई ऋण नहीं मिलने से खेती तथा अन्य सभी कार्य भी बाधित हैं। ऋण तथा ब्याज भुगतान के लिए जबाबदेह मिल प्रबंधन बार-बार झूठा आश्वासन देकर बैंकों को राशि भुगतान नहीं कर रहा है, जिससे रोज किसानों का खाता एनपीए होता जा रहा है। इसलिए चीनी मिल के सीएमडी से भुगतान की समय सीमा सुनिश्चित कराने के साथ किसानों को बैंकों से 'नो ड्यूज' प्रमाण पत्र दिलाना सुनिश्चित कराना भी जरूरी है, जिससे निर्दोष किसान बेमौत मरने से बच सकें।

इसी आशय का पत्र डीएम सीतामढ़ी तथा आरक्षी अधीक्षक को भी भेजकर उक्त मामले में किसानों की जिन्दगी तथा प्रतिष्ठा बचाने तथा पर्व त्योहार को देखते हुए गन्ना मूल्य के दो वर्षों के बकाये करीब 80 करोड़ रुपये का भुगतान कराने हेतु कारगर पहल का भी अनुरोध किया गया। **- डॉ. आनंद किशोर**

आभार बा बापू-150

बा बापू-150 के कार्यक्रम में जुटे हुए अब पांच साल पूरे हो गए हैं। विभिन्न प्रदेशों, शिक्षण संस्थाओं, गांवों-शहरों, बस्तियों, अनेक संगठनों, संस्थाओं, समूहों में बा बापू के विचारों पर अलग-अलग कार्यक्रमों के माध्यम से संपर्क-संवाद साधने का मौका मिला।

बा बापू-150 के माध्यम से सत्य, अहिंसा, सद्‌भावना, सौहार्द, समता, निडरता, सर्व धर्म समभाव, एकता, स्वराज, ग्राम स्वराज, ग्रामोद्योग, घरेलू उद्योग, कुटीर उद्योग, लघु उद्योग, ग्राम संस्कृति, खेती किसानी, पर्यावरण, जल, जंगल, जमीन, जीवन शैली, स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वावलंबन, स्वदेशी, स्वरोजगार, बाल, युवा, महिला शक्ति जागरूकता, विविधता, अनेकता में एकता तथा विकास की अवधारणा का संदेश प्रसारित किया जा रहा है। भय, भेद, भूख, भ्रम, भ्रष्टाचार, कर्ज, हिंसा, नशा, असहिष्णुता, नफरत, दिखावा, द्वेष, झूठ, शोषण तथा साम्प्रदायिकता मुक्त भारत बनाने का विचार जन जन तक पहुंचाने की कोशिश जारी है।

संतोष है कि पांच साल का यह संकल्प सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। आगे भी सक्रियता बनी रहेगी। पिछले पांच साल में बा बापू का संदेश देश के अनेक क्षेत्र, प्रदेश तक पहुंचाने का प्रयास किया गया। जहां तक संभव हुआ है गांव, कस्बा, नगर, महानगर में विभिन्न माध्यमों से संपर्क-संवाद साधने की कोशिश की है।

-रमेश चंद शर्मा

'संपूर्ण क्रांति की प्रासंगिकता' विषय पर संगोष्ठी

लोकनायक जयप्रकाश नारायण की 118वीं जयन्ती पर जिला सर्वोदय मंडल सीतामढ़ी के तत्वावधान में 'संपूर्ण क्रांति की प्रासंगिकता' विषय पर एक संगोष्ठी खादी भण्डार प्रागंण में आयोजित की गयी।

विषय प्रवेश कराते हुए डा आनंद किशोर ने कहा कि आज सत्ता बेलगाम हो गई है और मंहगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, कुशिक्षा के मुद्दे ज्यों के त्यों मौजूद हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था को कमजोर करने के साथ किसानों तथा श्रमिकों के अधिकारों पर हमले हो रहे हैं। ऐसे वक्त मे जेपी का संपूर्ण क्रांति का नारा ज्यादा प्रासंगिक बन गया है।

वरिष्ठ कम्यूनिस्ट नेता केदार शर्मा तथा राजकिशोर राय ने देश के समक्ष बढ़ती चुनौतियों के खिलाफ नौजवानों से आगे आने की अपील की। संगोष्ठी में गांधीवादी चितक रामप्रमोद मिश्रा, नगरअध्यक्ष लालबाबू मिश्रा,मंत्री हरिनारायण सिंह,जिला अलपसंख्यक सेल के अध्यक्ष मो मुर्तुजा, नन्द किशोर मंडल,पूर्व प्राचार्य ब्रजमोहन मंडल, ताराकांत झा, विजय कुमार शुक्ला, कृष्ण कुमार यादव, प्रो विनय कुमार चौधरी, प्रो अरुण पाठक, मो गयासुद्दीन, संजीव कुमार झा, मृत्युन्जय कुमार, ओमप्रकाश, आफताब अंजुम, प्रो ललन राय, सुरेशलाल कर्ण, खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष सुरेश प्रसाद सहित अन्य वक्ताओं ने कहा कि आज जेपी का आन्दोलन ज्यादा प्रासंगिक बन गया है, लोगों को आंदोलित होने की जरूरत है। **–डॉ. आनन्द किशोर**

जय जन जय भारत अभियान

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 151वीं जयंती पर सर्वोदय जागरण मंच द्वारा 'जय जन जय भारत' नामक एक राष्ट्रव्यापी महाअभियान शुरू किया गया। इस कार्यक्रम के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान करते हुए सर्वोदय जागरण मंच के अध्यक्ष नीरज कुमार ने बताया कि यह कार्यक्रम कोरोना की वैश्विक त्रासदी के दौरान असल भारत की मुश्किलों, आम जन की तकलीफों आदि के बारे में जानकारी जुटाने अपने देशवासियों के दुख दर्द को साझा करने और उनके बीच जन संपर्क स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। हम मानते हैं कि मानवीय जीवन पर आए इस संकट से हमें भारत के लोगों को बचाना है, क्योंकि भारत के लोग बचेंगे तभी भारत बचेगा। हमारा यह कार्यक्रम किसानों, युवाओं, महिलाओं और छात्रों के बीच पहुंचकर उनकी दिक्कतों व तकलीफों को समझने और उनके जीवन में आशा का नया संचार करने की कोशिश है। यह अभियान लोगों को कोरोना से बचाव के लिए भी जागरूक करेगा। **- नीरज कुमार**

'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

कविता

चंबल एक नदी का नाम

❑ नरेश सक्सेना

यमुना, गंगा, कृष्णा, कावेरी,
गोमती, अलकनंदा
यह तो लड़कियों के नाम हैं,
चंबल नही है किसी लड़की का नाम;

जबकि, चंबल वह अकेली और
अभागी नदी है,
जो पुराणों में वर्णित अपने स्वरूप को
आज तक कर रही है सार्थक,
चंबल में पानी नहीं खून बहता है,
चंबल में मछलियाँ नहीं लाशें तैरती हैं,
चंबल प्रतिशोध की नदी है,
और वह कौन सी लड़की है
जो प्रतिशोध और खून से भरी नहीं है?
और जिसमें लाशें नहीं तैरतीं?
फिर भी शारदा, सईं, क्षिप्रा,
कालिंदी तो लड़कियों के नाम हैं,
चंबल नहीं है किसी लड़की का नाम।

और वे नदियाँ,
जिनके नामों पर रखे गए लड़कियों के नाम
और जो स्वर्ग से उतरीं थीं,
धरती पर हमें तारनें,
आज खुद अपने तारे जाने के लिए
तरस रही हैं
भक्तों के मलमूत्र से,
वमन और विष्ठा और बलगम से भर कर
वे हो गई हैं कुंभी पाक,
लेकिन उसी मलमूत्र और वमन और विष्ठा से
दिया जा रहा सूर्य को अर्घ्य—
ओम् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुरवरेण्यम...।

चंबल पर कब्जे के लिए हुए
देवों और दानवों में युद्ध इस कदर
कि रक्त और चर्म से भरकर वह कहलाई
चर्मणवती, चर्मवती,
यानी चाम वाली चंबल।
आज जबकि बाजार आमादा है,
हर माता को चर्मवती बना देने के लिए
और कुछ अभागिनों को तो बना ही दिया जाता
है चर्मवती,

फिर भी
कल्याणी, सिंधु और जान्हवी
भागीरथी, सोन रेखा, नर्मदा, सरयू-मंदाकिनी
तो लड़कियों के नाम हैं,
चंबल नही है किसी लड़की का नाम।

देखो कितनी सारी नदियों के तो
नाम ही नहीं आए,
उन करोड़ों करोड़ नदियों के नाम
जो सुखा दी गईं स्रोत पर ही,
रह गईं अनाम।

याद करो वह नदी,
जो इतिहास में तो है, भूगोल में नहीं है।
वह विद्या और बुद्धि की नदी, सरस्वती
तो शायद शर्म से ही धरती में समा गई,
वह गोया, अब अपनी कब्र में ही बहती है।
चंबल की बेटियों के नाम हुए,
फूलन देवी, कुसुमा नाइन, गुल्लो बेड़िन
फूलकुसुम और गुल,
लेकिन फूलों के नाम वाली
ये बेटियाँ फूल नहीं थीं।
फूलों को नंगा नहीं किया जाता,
झोंटा पकड़कर घसीटा नहीं जाता
फूलों को जलती हुई बीड़ियों से दागा नहीं जाता।

कोमल अंगों में मिर्ची भरकर
कबुलवाया नहीं जाता कि वे डायनें हैं
शिशुओं के नर्म कलेजे चाट-चाट कर खाती हैं,
वे ही लाती हैं बाढ़, महामारी, अकाल, दुर्भाग्य,
मुकदमें वे ही हरवाती हैं।

हाथ डुबोए गए खौलते हुए तेल में
और फफोले पड़ते ही अपराध सिद्ध हो गए।
गिद्ध हो गए पंच परमेश्वर
और सभी जन
कांकर, पाथर, चिरई, कूकुर, भेड़ हो गए
घास हो गए, पेड़ हो गए।
फूलों के मुँह से निकली कुछ बुदबुद पर
चिल्लाया ओझा
लो सुन लो, इसने स्वयं कुबूला अपना डायन होना
अब ये मेरे हाथों मुक्ति चाहती है।

चौदह की या पंद्रह की, गुल्लो बेड़िन ने जब देखा,
पूरी पंचायत हत्यारी है।
और अगली उसकी बारी है,
तो जान बचा कर भागी

कुछ कहते—गुल्लो नागिन थी,
कुछ कहते बस, नाचने वाली बैरागिन थी,
कैसी दागी, कैसी बागी?
कहते हैं डाकू लाखन ने पीछे से
और पुलिस ने उसके सीने पर गोली दागी।

उस पर न कोई लेख,
न ही अभिलेखों में उल्लेख,
पुलिस का कहना है, किंवदंती है!
आज भी किंतु, गोहद बेसली नदी वाली
राहों से राही बचते हैं।
कहते हैं, सारी रात वहाँ गुल्लो के घुँघरू बजते हैं।

धूप में पजरकर
जब फूलों के तलवों में पड़ गईं बिवाइयाँ,
ओठों पर पपड़ियाँ, चेहरों पर झाइयाँ
बाल जटाजूट, सूजी हुई पलकें, सूजे हुए पाँव,
नींद से भरी आखें लाल
और झुलसी हुई खाल;
इस तरह,
जब उनकी सारी कोमलता को कर दिया नष्ट
और रूह को कुरूप,
तब कहा
"ये हैं दस्यु सुंदरियाँ"

कुत्तों और सियारों के रोने की आवाजों में
उनके रोने की आवाज।
तेज आँधियों में चट्टानों से टकरा,
बहते पानी में होती उनके होने की आवाज।

पछुआ चले तो पच्छिम से आती है
उनके रोने की आवाज।
और पुरवा चले तो पूरब से आती है उनके रोने
की आवाज।
और जब किसी दिशा में चलती नहीं हवाएँ,
होती है सांय सांय,
तब लोग समझ लेते हैं—
यह उनकी बेहोशी की आवाज।
गर्दन तक चलती हुई छुरी की खिस्स खिस्स,
शामिल होती कीर्तन के ढोल धमाकों में।

कहते हैं—एक दिन उन फूलों ने
अपनी पनहियों में भरकर पेशाब,
पिलाई अपने बलात्कारियों को
और पेड़ों से बाँधकर
उनके प्रजनन अंगों के चीथड़े उड़ा दिए

फूल कैसे हुए पत्थर,
और पत्थर कैसे हुए रेत,
यह फूलों के रेत हो जाने की कथा है
यह फूलों के खेत हो जाने की कथा है
यह फूलों के प्रेत हो जाने की कथा है ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए प्रकाशक अरविन्द अंजुम द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा
महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार